RNI क्र. 50309/85/पृष्ठ संख्या 44/प्रकाशन तिथि 1 अगस्त 2024

अंक 455 अगस्त 2024

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका

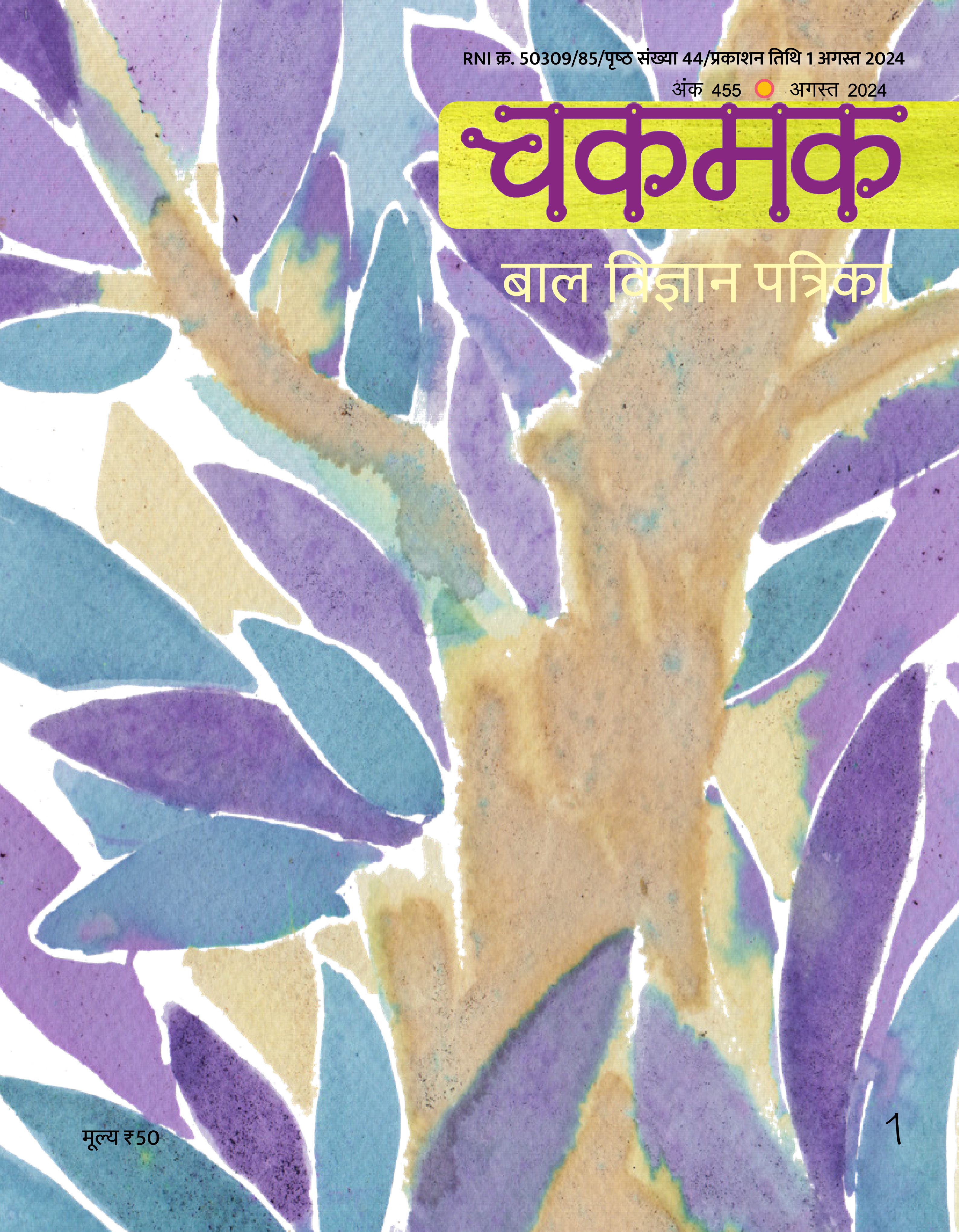

मूल्य ₹50

फूले कदम्ब

नागार्जुन

चित्र: शुभम लखेरा

टहनी-टहनी में कन्दुक सम झूले कदम्ब
फूले कदम्ब।
सावन बीता
बादल का कोप नहीं रीता
जाने कब से तू बरस रहा
ललचाई आँखों से नाहक
जाने कब से तू तरस रहा
मन कहता है, छू ले कदम्ब
फूले कदम्ब
फूले कदम्ब।

अंक 455 • अगस्त 2024

चकमक

इस बार

- फूले कदम्ब - नागार्जुन 2
- शकुन्तला - शशि सबलोक 4
- भूलभुलैया 7
- तुम भी बनाओ - जामुन से रंग - कनक शशि 8
- जामुन - सुशील शुक्ल 9
- हमारे पास कितने पेड़ हैं? - डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन, सुशील चन्द्रानी 10
- एक विद्रोह ऐसा भी... 1 - सी एन सुब्रह्मण्यम् 12
- क्यों-क्यों 16
- किताबें कुछ कहती हैं 22
- जलवायु परिवर्तन - भाग 2 - विनता विश्वनाथन 23
- मेहमान जो कभी गए ही नहीं - भाग 4 - आर एस रेश्मू राज, ए पी माधवन व साथी 26

- माथापच्ची 28
- जंगली जी - नेहा बहुगुणा 30
- चित्रपहेली 34
- मेरा पन्ना 36
- तुम भी जानो 43
- जैव विकास जीनियस - रोहन चक्रवर्ती 44

आवरण चित्र: कनक शशि

सम्पादक
विनता विश्वनाथन

सह सम्पादक
कविता तिवारी

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी
उमा सुधीर

डिज़ाइन
कनक शशि

सलाहकार
सी एन सुब्रह्मण्यम्
शशि सबलोक

वितरण
झनक राम साहू

एक प्रति : ₹ 50

सदस्यता शुल्क
(रजिस्टर्ड डाक सहित)
वार्षिक : ₹ 800
दो साल : ₹ 1450
तीन साल : ₹ 2250

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चेक से भेज सकते हैं।
एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण:
बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एकलव्य
फोन: +91 755 2977770 से 2 तक; ईमेल: chakmak@eklavya.in,
वेबसाइट: https://www.eklavya.in/magazine-activity/chakmak-magazine

शकुन्तला

शशि सबलोक

चित्र: ऋषि साहनी

हमारे घर के सामने एक मकान बिका था। नए मालिक ने दो-चार दिनों में ही उस मकान को तुड़वा दिया। वहाँ एक खाली प्लॉट रह गया। बहुत सारे ऊँचे-ऊँचे घरों के बीच एक खाली प्लॉट। वहाँ लोग कचरा डालने लगे। गली के कुत्तों को वहाँ खाने और रहने की अच्छी जगह मिलने लगी। गायें भी आने लगीं। सूअर भी आने लगे। सबको वहाँ कुछ न कुछ मिल जाता था। अच्छी चहल-पहल रहने लगी। अब वो प्लॉट खाली नहीं रहा।

एक रात उस प्लॉट से ज़ोर-ज़ोर की आवाज़ आई। लोगों ने ऊँची छतों से झाँककर देखा। गेट खोलकर देखा। कोने में एक सूअरनी दिखी। थोड़ी देर में आवाज़ आनी बन्द हो गई। अगली सुबह देखा कोने में सूअरनी ने बच्चे दिए हैं। लोग आते-जाते उस कोने में झाँकने लगे थे। जिसे भी प्लॉट का गेट खुला दिखता, बन्द कर देता। सूअरनी अपनी जगह पर ही बैठी दिखती। दो-चार दिनों में बच्चों की आवाज़ें आने लगी। वो कोने में एक-दूसरे के ऊपर लेटे रहते। वे सफेद, मुलायम दिखते। सूअरनी अब थोड़ी देर को उठने लगी। कचरे में उसे कुछ खाने को मिल जाता। किसी ने उसे नाम दिया – शकुन्तला।

उसे कचरे में मुँह मारता देख लोगों ने सोचा उसे कुछ और खाने को देते हैं। पर उन्हें पता नहीं था कि सूअर खाते क्या हैं। किसी ने घी में आटे को भूनकर उसमें गुड़ डाला। और पानी डालकर शीरा बनाया। पर शकुन्तला ने खाया नहीं। दो-तीन बार उसने नहीं खाया तो लोगों ने उनके खाने का पता किया। “आटे के बड़े-बड़े गोले बनाकर दीजिए। वो खा लेगी।” किसी जानकार ने कहा। लोग बारी-बारी से उसके लिए आटे के गोले लाने लगे। कोई उसमें थोड़ा गुड़ मिला देता। कोई घी और अजवाइन भी डाल देता। दिन में तीन-चार बार उसे खाना दिया जाने लगा। छह बच्चे दिन भर सूअरनी का दूध पीते रहते थे। सूअरनी को भूख बहुत लगती थी। वो आटे के गोले खाती। कचरे में भी उसे खाने को मिल जाता।

बच्चे अब आठ-दस दिन के हो गए थे। कुत्ते प्लॉट के आसपास ज़्यादा मँडराने लगे थे। जैसे ही शकुन्तला कोने से हटती, कुत्ते गेट फाँदकर अन्दर चले जाते। शकुन्तला अपना खाना छोड़ चीखती हुई बच्चों के पास पहुँच जाती। ऊँची छतों से लोग झाँकने लगते। कुछ लोग गेट खोलकर कुत्तों को भगाने लगते। शकुन्तला कोने में बैठ कुत्तों पर गुर्राने लगती। धीरे-धीरे बच्चे कोने के आसपास घूमने लगे। शकुन्तला अब और ज़्यादा चौकन्नी रहने लगी थी। लोग भी आते-जाते गेट से झाँक जाते थे।

एक दोपहर एक बच्चे की रिरियाने की तेज़ आवाज़ आई। साथ ही शकुन्तला के ज़ोर-ज़ोर से चीखने की भी। लोग दरवाज़े खोल बाहर निकल आए। ऊँची छतों से झाँककर लोग फटाफट सीढ़ियाँ उतरने लगे। एक कुत्ता मुँह में बच्चे को लिए सड़क पर भागा जा रहा था। कुछ लोग पत्थर उठाकर कुत्ते के पीछे भागे। कुछ गेट के पास खड़े होकर शकुन्तला को देखने लगे। शकुन्तला कोने में बच्चों के ईर्द-गिर्द मँडरा रही थी। बच्चे सहमे-से लगे। कुत्ता बच्चे को लिए इतनी तेज़ी-से भागा कि लोग मायूस लौट आए। लौट आए लोग भी गेट के पास खड़े रहे। आवारा कुत्तों को कोसते रहे। इन्हीं कुत्तों को यही लोग अब तक खाना देते रहे थे।

पर उन्हें पता नहीं था कि सूअर खाते क्या हैं। किसी ने घी में आटे को भूनकर उसमें गुड़ डाला। और पानी डालकर शीरा बनाया। पर शकुन्तला ने खाया नहीं। दो-तीन बार उसने नहीं खाया तो लोगों ने उनके खाने का पता किया।

शकुन्तला अपने बच्चों के साथ चली गई। लोग अपने-अपने घरों को लौटने लगे। एक को ज़रा देर से खबर लगी थी। उसने लौटते लोगों से शकुन्तला का हाल पूछा। उसके हाथ में एक पॉलिथिन में कुछ खाना था।

कुछ लोग शकुन्तला के लिए खाना ले आए। शकुन्तला देर तक कोने में बैठी रही। धीरे-धीरे लोग अपने-अपने घरों को लौट गए।

उसी रात फिर शोर मचा। इस बार लोग छतों से झाँके बिना फटाफट सीढ़ियाँ उतर आए। दरवाज़े भी तुरन्त खुले। लोगों ने एक कुत्ते को गेट फलाँगते देखा। इस बार गुस्से से कई हाथ उठे। हाथों में पत्थर थे। टाँगों में रफ्तार थी। रात की सड़क खाली थी। शकुन्तला कोने में दुबके बच्चों के आसपास घूमती जा रही थी। कुछ लोग गेट पर खड़े दूर दिख रहे कुत्तों को पत्थर से डरा रहे थे। बार-बार नज़रें सड़क की ओर जा रुक रही थीं। थोड़ी देर में कुछ लोग लौटते दिखे। टाँगों में रफ्तार थी। लोग गेट छोड़ सड़क पर आ गए। सामने वाले के हाथ में बच्चा था। लोगों ने उसे घेर लिया। बच्चे को उलट-पलटकर देखा। एक तरफ दाँत लगा था। खून बह रहा था।

“कोई नहीं, कोई नहीं। ठीक हो जाएगा।”

“माँ के पास ले जाओ। वो चाट लेगी। ठीक हो जाएगा।”

“घबरा गया है। मौत के मुँह से लौटा है।”

भीड़ बच्चे को हाथों में लिए खड़ी रही। फिर एक ने उसे माँ के पास रख दिया। माँ उसके पास खड़ी रही। उसे सूँघती-सी।

फिर उसे बाकी बच्चों के पास लुढ़का दिया। और खुद भी वहीं बैठ गई।

भीड़ कुछ देर सड़क पर खड़ी रही...

“खून लग गया है इन कुत्तों के मुँह अब।”

“कब तक बचा पाएँगे। कुछ तो करना होगा।”

“हाँ, नगर निगम वालों से बात करते हैं।”

भीड़ धीरे-धीरे छँटने लगी।

अगले दिन किसी ने नगर निगम को फोन किया। नगर निगम वालों ने मोहल्ले का नाम दर्ज किया। उन्हें पता होता था कि वहाँ आसपास कौन लोग सूअर पालते हैं। उन्हें खबर की होगी। चार घण्टे बाद नगर निगम की गाड़ी में कुछ लोग आए। लोग अपने-अपने घरों से निकल आए। शकुन्तला और बच्चों को गाड़ी में चढ़ाया। एक ने पॉलिथिन में कुछ खाना गाड़ीवालों को पकड़ा दिया। गाड़ी चल दी। लोगों ने हाथ हिलाकर ‘बाय’ किया। मोड़ तक गाड़ी दिखती रही। लोग खड़े रहे। कुछ कुत्ते भी आ गए थे।

शकुन्तला अपने बच्चों के साथ चली गई। लोग अपने-अपने घरों को लौटने लगे। एक को ज़रा देर से खबर लगी थी। उसने लौटते हुए लोगों से शकुन्तला का हाल पूछा। उसके हाथ में एक पॉलिथिन में कुछ खाना था। उसने एक पत्थर पर वो खाना रखा। और प्लॉट का गेट खोल दिया।

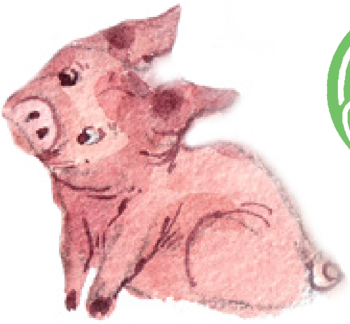

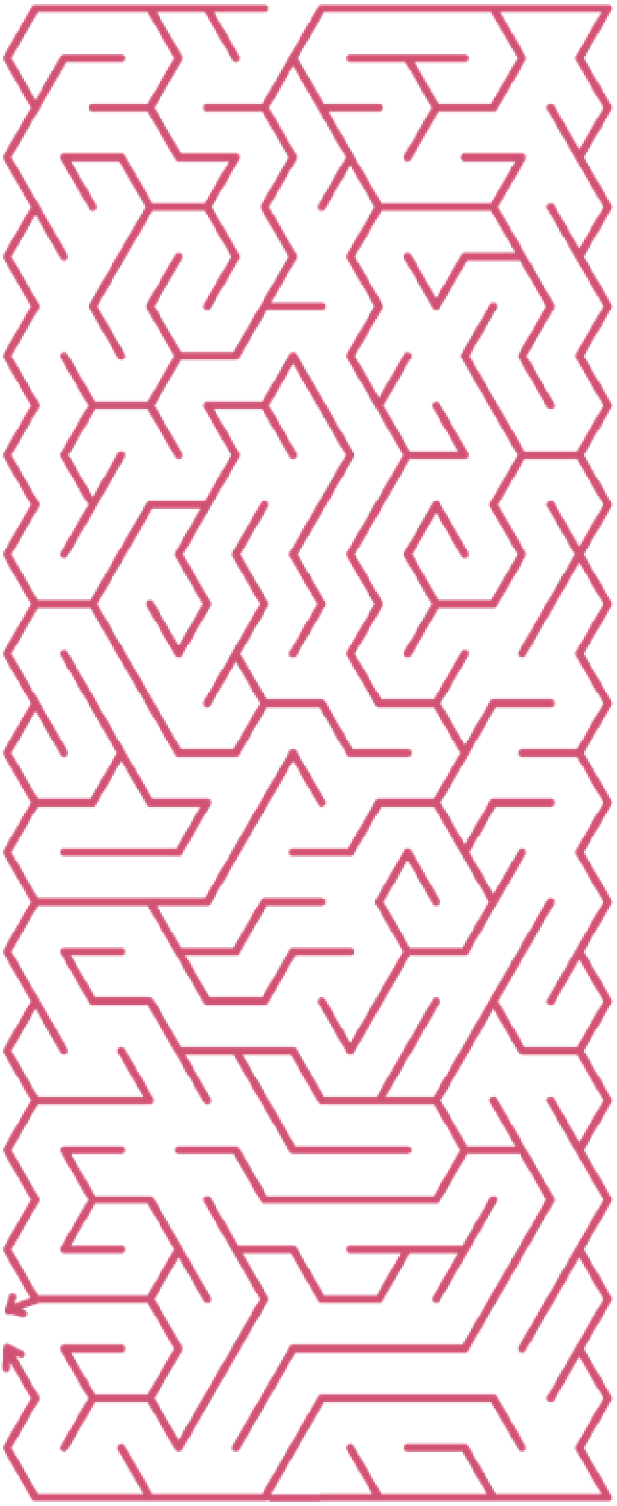

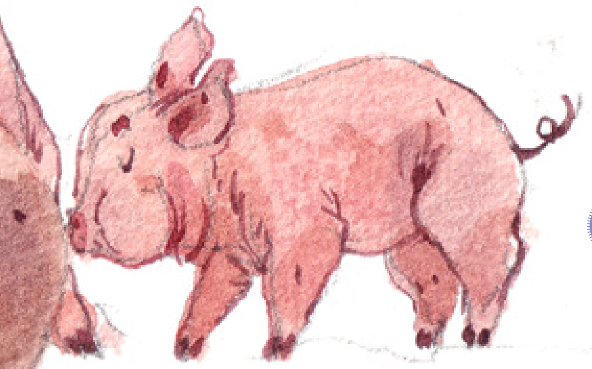

कनक शशि

नाम से ही ज़ाहिर है कि जामुन से जामुनी रंग बनता है। जामुन खाने से जुबान नीली-जामुनी हो जाती है। पर क्या हम कुछ जादू करके जामुन से कुछ और शेड व रंग बना सकते हैं? चलो करके देखते हैं।

जामुन से रंग

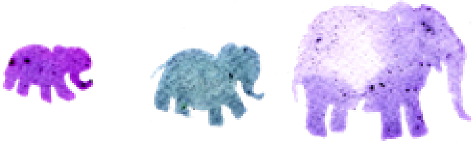

जुगाड़

8-10 जामुन, छह कटोरियाँ, चम्मच, बेकिंग पाउडर, मीठा सोडा, फिटकरी पाउडर, नींबू का रस, वाशिंग पाउडर (सफेद रंग का), चाय की छन्नी, पेंटिंग ब्रश, एक सूखा कपड़ा और इमामदस्ता।

रंग बनाने के लिए

- 8-10 जामुन लो, उन्हें मसलकर जामुन के छिलके और गूदे को गुठली से अलग कर लो।
- इन छिलकों और गूदे को इमामदस्ता में कूटकर लुगदी बना लो।
- इस लुगदी को चम्मच से दबा-दबाकर छन्नी से रस छान लो। इस रस में पानी मत मिलाना।
- इसी रस से हम अलग-अलग रंग बनाएँगे।

छह कटोरियाँ लो और उनमें दो-दो चम्मच जामुन का रस डालो। फिर हर कटोरी में नीचे बताया गया सामान मिलाओ –

आधा चम्मच फिटकरी पाउडर

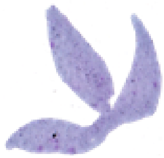

आधा चम्मच मीठा सोडा

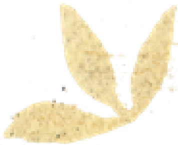

3-4 बूँद नींबू का रस

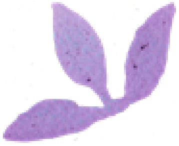

जामुन

सुशील शुक्ल

हमने जामुन खाए
स्कर्ट पर रस टपका
दो धब्बे आए
दोस्त करें कानाफूसी
और टीचर बुलाए
कितनों ने छाती कूटी
की हाय हाय हाय
हमने और जामुन खाए
जी भर के जामुन खाए
दुनिया भाड़ में जाए।

आधा चम्मच
बेकिंग पाउडर

आधा चम्मच
वाशिंग पाउडर

कुछ भी नहीं

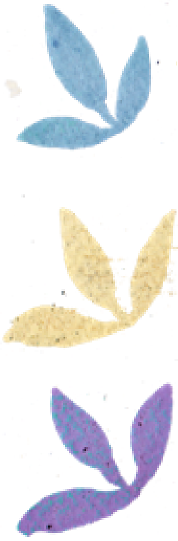

रंग तैयार हैं! तुम अपना शेड कार्ड बनाओ। सभी कटोरियों के रंगों के टेस्ट पैच बनाओ। उन्हें सूखने दो। फिर देखो किस तरह के शेड बने हैं।

तुम जो भी चित्र बनाओ, उनकी तस्वीरें हमें ज़रूर भेजना।

हमारे पास कितने पेड़ हैं?

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन, सुशील चन्दानी

पृथ्वी पर कितने पेड़ हैं, कुछ साल पहले इसका विस्तृत विश्लेषण किया गया था। अध्ययन का अनुमान था कि हमारी पृथ्वी पर करीब तीस खरब पेड़ हैं। इस संख्या को हम ऐसे भी देख सकते हैं कि प्रति व्यक्ति औसतन 400 से थोड़े अधिक पेड़ हैं। यह संख्या चौंकाने वाली है, क्योंकि यह पूर्व में वैज्ञानिकों द्वारा लगाए गए सभी अनुमानों से बहुत ज़्यादा है। उपग्रह (सैटलाइट) से प्राप्त चित्रों से यह भी पता चला कि ये पेड़ पृथ्वी पर किस तरह वितरित हैं।

वृक्षों की गणना में ज़मीनी वृक्षों की गणना सैम्पल के आधार पर की गई थी। और उपग्रहों से प्राप्त तस्वीरों के साथ रखकर उन आँकड़ों को देखा गया था। और फिर कम्प्यूटर पर एक एल्गोरिदम की मदद से आँकड़ों का विश्लेषण करके वृक्षों की कुल संख्या का अनुमान लगाया गया था।

पृथ्वी पर मौजूद कुल पेड़ों का 15-20 प्रतिशत हिस्सा दक्षिण अमेरिकी वर्षावनों में है। इसके बाद बारी आती है कनाडा और रूस में फैले बोरियल जंगलों या टैगा में शंकुधारी (कोनिफर) वनों की। कहा जा सकता है कि कनाडा का प्रत्येक बाशिन्दा लगभग 9000 वृक्षों से 'समृद्ध' है।

इसके ठीक विपरीत, मध्य पूर्वी द्वीप राष्ट्र बाहरीन के 15 लाख वासियों को मात्र 3100 पेड़ों का सहारा है। यहाँ प्रति वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में मात्र पाँच पेड़ हैं।

पेड़ क्यों इतने ज़रूरी?

यह गौरतलब है कि पृथ्वी के विशाल क्षेत्र अपेक्षाकृत कम पेड़ों वाले घास के मैदान हैं। कुल मिलाकर, घास उतनी ही ऑक्सीजन बना सकती है जितना कि दुनिया भर के पेड़। फिर हमारे पास समुद्री सायनोबैक्टीरिया और शैवाल हैं – इन सूक्ष्मजीवों के प्रकाश संश्लेषण से उतनी ही ऑक्सीजन बनती है जितनी कि सभी स्थलीय पेड़-पौधों से।

पेड़ ऑक्सीजन बनाने के अलावा वातावरण से कार्बन हटाने में अहम भूमिका निभाते हैं। लाखों साल पहले उगे पेड़ दलदल में डूबने और दबने के बाद धीरे-धीरे कोयले में बदल गए और इस तरह उन्होंने कार्बन को बहुत लम्बे समय तक वायुमण्डल में जाने से थामे रखा। बेशक, आप बिजली पैदा करने के लिए थर्मल पावर प्लांट में कोयले को जलाकर कार्बन को वायुमण्डल में वापस जाने से रोकने की पेड़ों की सारी मेहनत पर फटाफट पानी फेर सकते हैं। साथ ही कार्बन डाईऑक्साइड को वायुमण्डल में छोड़कर ग्लोबल वार्मिंग बढ़ा सकते हैं।

भारत की स्थिति

हमारे अपने देश के लिए अनुमान है कि भारत के प्रत्येक व्यक्ति पर लगभग 28 पेड़ हैं। उच्च जनसंख्या घनत्व और लम्बे समय से हो रही वनों की कटाई के कारण यह संख्या इतनी ही रह गई है। बांग्लादेश, जिसका जनसंख्या घनत्व भारत से तीन गुना अधिक है, वहाँ प्रति नागरिक छह पेड़ हैं। नेपाल और श्रीलंका दोनों देशों में प्रति व्यक्ति सौ से थोड़े अधिक पेड़ हैं।

भारत की भौगोलिक विविधता के चलते प्राकृतिक वन क्षेत्र में बड़ा फर्क है। पश्चिमी घाट और पूर्वी घाट में, पूर्वोत्तर भारत में और अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह में नम उष्णकटिबन्धीय वनों का घना आच्छादन, उच्च वर्षा और समृद्ध जैव विविधता देखी जाती है। अरुणाचल प्रदेश का अस्सी प्रतिशत भूक्षेत्र वनों से ढँका है; वहीं राजस्थान में यह वनों से ढँका क्षेत्र 10 प्रतिशत से भी कम है।

भारत की वन नीति का एक लक्ष्य है कि देश के एक-तिहाई हिस्से को वनों से ढँका हुआ क्षेत्र बनाना। नष्ट हुए जंगलों में पेड़ लगाने के प्रयास इस लक्ष्य को हासिल करने में योगदान देते हैं। लेकिन इससे अधिक महत्वपूर्ण है वनों की कटाई को रोकना। इस मामले में दक्षिणी राज्यों ने बेहतर प्रदर्शन किया है। 2021 की एक रिपोर्ट के अनुसार वन आवरण में सबसे अच्छा सुधार करने वाले तीन राज्य हैं कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडु।

स्रोत फीचर्स से साभार

एक विद्रोह ऐसा भी... 1

सी एन सुब्रह्मण्यम्

किसान आन्दोलन 2020-21

जब कोरोना महामारी अपने चरम पर थी, तब लाखों किसान और खेतिहर मज़दूर राजधानी दिल्ली को चारों ओर से घेरकर बैठे थे – महीनों-महीनों तक, एक साल से भी ज़्यादा समय तक। हज़ारों ट्रैक्टर-ट्रॉली और टैंट, भीड़-भड़क्का, बन्दूकों से लैस पुलिस, लगता था कोई युद्धभूमि है। कड़ी धूप, बारिश, कड़ाके की ठण्ड और मानव इतिहास की सबसे भयानक महामारी का प्रकोप, इन सबके बीच ये किसान डटे रहे।

वे केन्द्र सरकार द्वारा पारित कुछ कानूनों का विरोध कर रहे थे जो कृषि उपज की बिक्रि से सम्बन्धित थे। ये कानून किसानों के फायदे के लिए था कि नहीं, इस पर विवाद ज़रूर बना हुआ है। लेकिन विरोध कर रहे किसानों में इसके बारे में कोई दो राय नहीं थी। अन्त में सरकार ने किसानों की माँगों को कुछ हद तक स्वीकार किया और उन कानूनों को वापस ले लिया। यह स्वतंत्र भारत के 75 साल के इतिहास में सबसे बड़ा किसान विरोध प्रदर्शन था। एक तरह से इसे नाफरमानी या विद्रोह भी कहा जा सकता है।

किसान खेतों में मेहनत करके अनाज आदि पैदा करते हैं, लेकिन उसका पूरा लाभ उन्हें नहीं मिलता है। पुराने समय में राजे-रजवाड़े, जागीरदार, या ज़मींदार किसानों से लगान के रूप में उनकी उपज का बड़ा हिस्सा हथिया लेते थे। और फिर सेठ साहूकार भी अपना हिस्सा मार लेते थे। स्वतंत्र भारत में यह सब काफी कम हुआ और किसानों के हालात बेहतर तो हुए, मगर आधुनिक खेती के तरीके अधिकांश किसानों के लिए एक चुनौती ही बने हुए हैं। किसान बैंकों या साहूकारों से कर्जा लेकर खेती की लागत जैसे, खाद, बीज, बिजली, दवा, मशीन खरीदते हैं और उत्पादन करते हैं। इस उत्पाद को बाज़ार में बेचने पर ही वे बैंकों की किश्त जमा कर सकते हैं या घर का खर्च निकाल सकते हैं या अगली फसल की तैयारी कर सकते हैं।

मगर किसानों को लगता है कि उन्हें अपनी उपज का उचित दाम नहीं मिलता है और वे कर्ज में डूबते जाते हैं। एक दौर था जब देश के कई प्रान्तों में हज़ारों हताश किसानों ने आत्महत्या कर ली। किसानों की माँग है कि सरकार कुछ न्यूनतम कीमत की गारंटी दे ताकि निजी व्यापारी मनमानी न करें।

यह तो हुई बात 2020-21 की। मगर किसानों द्वारा अपने शोषण के खिलाफ आन्दोलन और विद्रोह भारत और विश्व इतिहास में लगातार देखने को मिलता है। भारत, चीन, जापान, ईरान, यूरोप, अमेरिका इन सभी जगहों पर किसान आन्दोलन अलग-अलग रूप में पिछले दो हज़ार सालों से देखने को मिलते हैं। इस तरह के किसान विद्रोहों के बारे में खासकर हमारे उपमहाद्वीप के उदाहरणों के बारे में हम आगे कुछ अंकों में लिखेंगे। उन्हें पढ़ना और अगर तुम्हारे इलाके में ऐसे आन्दोलन के कोई उदाहरण हों तो उसके बारे में पता करके लिख भेजना।

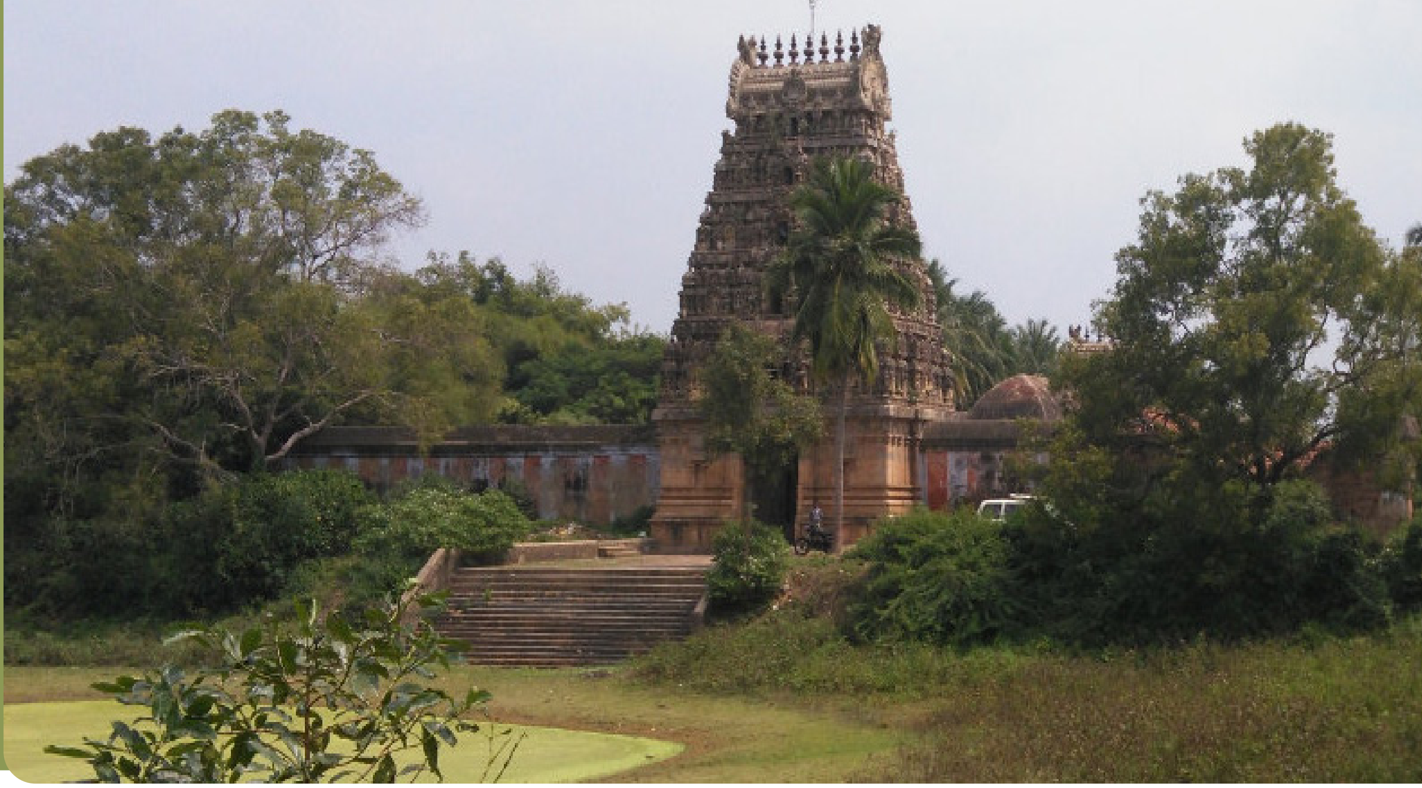

कोरुक्काई मन्दिर का गोपुर द्वार और तालाब

98 उल्टे हाथ, 98 सीधे हाथ जाति-समाजों का विद्रोह – विजयनगर साम्राज्य के खिलाफ

बात आज से 600 साल पहले की है। सुदूर दक्षिण भारत की बात जहाँ तमिल भाषा बोली जाती है। सही-सही कहें तो सन 1428-29 के उत्तरी और मध्य तमिलनाडु में ये घटनाएँ घटी थीं। उसके कुछ पचास साल पहले ही वहाँ महान विजयनगर सम्राटों का शासन स्थापित हुआ था। उन्होंने वहाँ के स्थानीय वन्नियर राजाओं को हराकर उत्तरी तमिलनाडु को अपने विशाल साम्राज्य में मिलाया था। दूसरे राजा की सेना, उसके अधिकारी और उनके ठेकेदारों को स्थानीय तौर-तरीके पता नहीं थे, न ही उनमें उनकी रुचि थी। बस अधिक लगान उगाही में ही उनकी रुचि थी – किसानों से, कारीगरों से, व्यापारियों से, भूमिहीन दलितों से भी। वे लगातार लगान और करों की मात्रा बढ़ाते गए।

लगान की मात्रा बढ़ाने की एक और तरकीब थी मापने की डण्डी को छोटा करना। मान लो, एक ज़मीन की लम्बाई और चौड़ाई चार मीटर गुणित चार मीटर है, यानी 16 वर्ग मीटर है। अगर एक मीटर की लम्बाई को 100 सेंटीमीटर न मानकर 75 सेंटीमीटर कर दो तो उतनी ही ज़मीन अब पाँच मीटर गुणित पाँच मीटर, यानी 25 वर्ग मीटर कहलाएगी। अगर लगान की दर प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से हो तो 16 वर्ग मीटर ज़मीन वाले को 25 वर्ग मीटर का लगान चुकाना पड़ता। विजयनगर के नए शासक ज़मीन नापने की डण्डी को मनमाने तरीके से छोटा करने लगे।

धन के लालच में उन्होंने मन्दिरों की ज़मीन को भी नहीं छोड़ा। तमिलनाडु के मन्दिरों को बहुत-सी ज़मीनें दान में मिली थीं जिस पर वहाँ के किसान खेती करते थे। वे उपज का एक हिस्सा मन्दिर को देते थे ताकि मन्दिर का कामकाज चले। मगर अब विजयनगर के अधिकारी व उनके ठेकेदारों ने मन्दिरों की ज़मीन को अपने वश में कर लिया और उसकी उपज खुद रखने लगे।

इस सब के कारण तमिलनाडु के किसान, कारीगर, गाँव के भूमिहीन मज़दूर सभी परेशान थे। लगातार कुछ छुटपुट घटनाएँ होने लगीं। कहीं किसान दुखी होकर खेती-किसानी छोड़कर दूसरे इलाके में जा बसे। कहीं वे अधिकारियों से लड़ने लगे। कहीं वे विजयनगर में सम्राट के पास अरजी ले गए। मगर स्थिति सुधरने के बजाए बिगड़ती गई।

यह सब हमें कैसे पता चलता है?

तमिलनाडु के गाँवों व शहरों में अनेक पुराने मन्दिर ग्रेनाइट पत्थर के बने हैं। उनकी दीवारों पर ऐसे अनेक शिलालेख हैं जो उस गाँव में घटी प्रमुख घटनाओं को दर्ज करते हैं। ऐसे अनेक मन्दिरों से सन 1400 के बाद से ऐसे शिलालेख मिलने लगते हैं जिनसे इन घटनाओं के बारे में पता चलता है। लेकिन 1429 में अचानक जगह-जगह से अलग तरह के शिलालेख हमें मिलने लगते हैं। उनमें से एक शिलालेख कोरुक्कई नाम की जगह से है। इसके कुछ अंश पढ़ते हैं–

जब वीर प्रताप देव रायर पृथ्वी पर राज्य कर रहे थे, तब सौम्य नाम के वर्ष में इस ज़िले के हम सीधे हाथ के 98 और उल्टे हाथ के 98 ने साथ मिलकर निर्णय किया कि हमसे फसल के अनुसार लगान न लेकर अन्याय से ज़बरन लगान लेने के कारण हम दुखी होकर इस ज़िले से भागने की तैयारी कर रहे थे। तभी हमें सूझा कि क्या ऐसा नहीं है कि यह अन्याय हमारे साथ इसलिए हो रहा है क्योंकि हम ज़िले के लोग एक नहीं हुए हैं? तो हमने तय किया कि हम न्यायसंगत लगान ही देंगे और अनुचित लगान नहीं देंगे। और जैसे कि आसपास के इलाके के लोगों ने निर्णय लिया है और जगह-जगह मन्दिर की दीवार पर खुदवाया है, हम सबने भी इस मन्दिर में मिलकर यह निर्णय किया और इसे इस मन्दिर की दीवार पर खुदवाया।

इसके बाद उन्होंने एक-एक करके विभिन्न प्रकार की ज़मीन पर होने वाली विभिन्न फसलों पर दिए जाने वाले न्यायसंगत लगान, विभिन्न कारीगरों से लिए जाने वाले कर का विवरण दिया। और यह भी कहा कि इस मन्दिर की दीवार पर 14 फुट डण्डी की लम्बाई दी गई है, इसके अनुरूप ही मापने की डण्डी होगी। व्यापारियों से बिक्री के अनुसार ही लगान लिया जाएगा। अगर कोई इसका उल्लंघन करे तो उसे हम अपने ज़िले से बाहर कर देंगे और उन्हें सिर पर मारकर और ज़मीन पर पटककर खींचकर ले जाएँगे और बाहर कर देंगे।....

यह शिलालेख 31 लाइन का है और हरेक लाइन में लगभग 30 शब्द हैं। अब तुम अनुमान लगा सकते हो कि यह कितना लम्बा होगा। इसमें बारीकी से न्यायसंगत लगान की दर दर्ज की गई थी। ऐसे कई शिलालेख तमिलनाडु के लगभग 15-20 जगह से मिलते हैं। कुछ लम्बे, कुछ छोटे...

ये उल्टे हाथ, सीधे हाथ का क्या मामला है?

हम जानते हैं कि भारत के अधिकांश इलाकों में जाति आधारित समाज है। सारी जातियाँ हैसियत और अधिकारों की एक सीढ़ी पर होती हैं – कोई ऊपर, तो कोई नीचे। हर जाति किसी और जाति के ऊपर होती है और किसी और जाति के नीचे। यानी ऊँच-नीच की बात जाति व्यवस्था के केन्द्र में है। जब जाति आधारित समाज की कल्पना की गई थी तो धर्म ग्रन्थों में कहा गया था कि सबसे श्रेष्ठ और ऊँची जाति ब्राह्मणों की है जो मनुष्य के शरीर में सिर के समान हैं। फिर क्षत्रिय जातियाँ बाँहों जैसी, फिर वैश्य जो जंघाओं जैसे हैं और सबसे नीचे शूद्र हैं जो शरीर के पाँव जैसे हैं। शरीर किसी एक भाग

के बिना चल नहीं सकता है मगर सिर की हैसियत पाँव की तुलना में कहीं अधिक होगी।

अब इतनी ऊँच-नीच की बातों के बीच जातियों के बीच एकता लाना हमेशा से एक गम्भीर समस्या रही है। तमिल लोगों ने इसका एक उपाय निकाला। उन्होंने सामाजिक शरीर को सिर, हाथ, जंघा और पाँव के रूप में तो देखा मगर साथ-साथ उस शरीर को दाएँ और बाएँ हिस्सों में बाँटा। मतलब समाज में ऊँच-नीच तो है, मगर ज़रूरत पड़ने पर दाएँ या बाएँ तरफ की सारी जातियाँ, सिर से लेकर पाँव तक, एक साथ आ सकती थीं और अपना हित साध सकती थीं। मान्यता यह थी कि 98 जातियाँ बाईं तरफ की हैं और 98 दाईं तरफ की। दोनों के बीच में भी तनाव था, मगर ज़रूरत पड़ने पर वे साथ भी आ सकते थे। ऐसे मौके कभी-कभार ही आते थे, जब सब पर कोई विपदा टूट पड़े। आज से 600 साल पहले तमिलनाडु के लोगों को लगा कि विजयनगर साम्राज्य की स्थापना से ऐसी विपदा आई है।

विद्रोहियों ने यह नहीं कहा कि राजा को हटाओ, सेनापति या अधिकारी को हटाओ, या ठेकेदार को हटाओ, इसे मारो या उसे मारो। उन्होंने राजा या अधिकारियों को सम्बोधित तक नहीं किया। उन्होंने आपस में तय किया कि भई हम इतना ही लगान देंगे, इस माप के अनुसार देंगे। और इससे ज़्यादा माँगें तो एक साथ आकर इसका विरोध करेंगे और उनकी कोशिश को नाकाम कर देंगे। जब उचित लगान की मात्रा तय करने लगे तो बहुत बारीकी से हर तरह की मिट्टी में होने वाली हर तरह की उपज के लिए अलग-अलग दर तय की गई। हर तरह के कारीगर या पेशेवरों से क्या लिया जा सकता है, यह अलग-अलग तय किया गया। यहाँ तक कि ज़मीन नापने की डण्डी कितनी लम्बी होगी यह भी मन्दिर की दीवार पर खुदवाकर सुनिश्चित कर दिया गया।

जब एक बड़े इलाके की सभी जाति के लोग मिलकर कोई बात तय करें तो किसकी मजाल थी कि उसे अस्वीकार करें या अमान्य कर दे। विजनगर साम्राज्य को उनकी बात माननी पड़ी और अपने तौर-तरीके भी बदलने पड़े।

मन्दिर की दीवार पर खुदा एक शिलालेख।

क्यों क्यों

क्यों-क्यों में इस बार का हमारा सवाल था:

सभी पत्तियाँ एक जैसी क्यों नहीं होतीं?

कई बच्चों ने हमें दिलचस्प जवाब भेजे हैं। इनमें से कुछ तुम यहाँ पढ़ सकते हो।

अगले अंक के लिए सवाल है:

कहते हैं कि बड़ों की बात माननी चाहिए, वो भी अक्सर बिना सवाल किए। क्या तुम्हें भी ऐसा ज़रूरी लगता है, क्यों? और क्या तुम चाहोगे कि तुम्हारी बात भी लोग बिना सवाल किए मानें? और क्यों?

तुम्हारा मन करे तो तुम भी अपने जवाब हमें भेजना। जवाब तुम लिखकर या चित्र/कॉमिक बनाकर दे सकते हो।

अपने जवाब तुम हमें merapanna.chakmak@eklavya.in पर ईमेल कर सकते हो या फिर 9753011077 पर व्हॉट्सऐप भी कर सकते हो। चाहो तो डाक से भी भेज सकते हो। हमारा पता है:

चकमक

एकलव्य फाउंडेशन,
जमनालाल बजाज परिसर,
जाटखेड़ी, फॉर्चून कस्तूरी के पास,
भोपाल - 462026, मध्य प्रदेश

उत्कर्ष वर्मा, आठवीं, दीपालया कम्युनिटी लाइब्रेरी, गोलाकुआँ, दिल्ली

सभी पेड़ों की पत्तियाँ एक जैसी इसलिए नहीं होतीं क्योंकि हरेक पेड़ की अपनी प्रजाति होती है। हरेक पेड़ के फूल और फल भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं। अगर सभी पेड़ के पत्ते एक जैसे होते तो हर पेड़ बहुत बकवास लगता। हर जगह एक जैसे पत्ते होंगे तो कोई भी पेड़ लगाना ही नहीं चाहेगा। और सारी दुनिया एक जैसी दिखने लगेगी।

चित्र: आरुषि चौहान, पाँचवीं, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, मातली, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

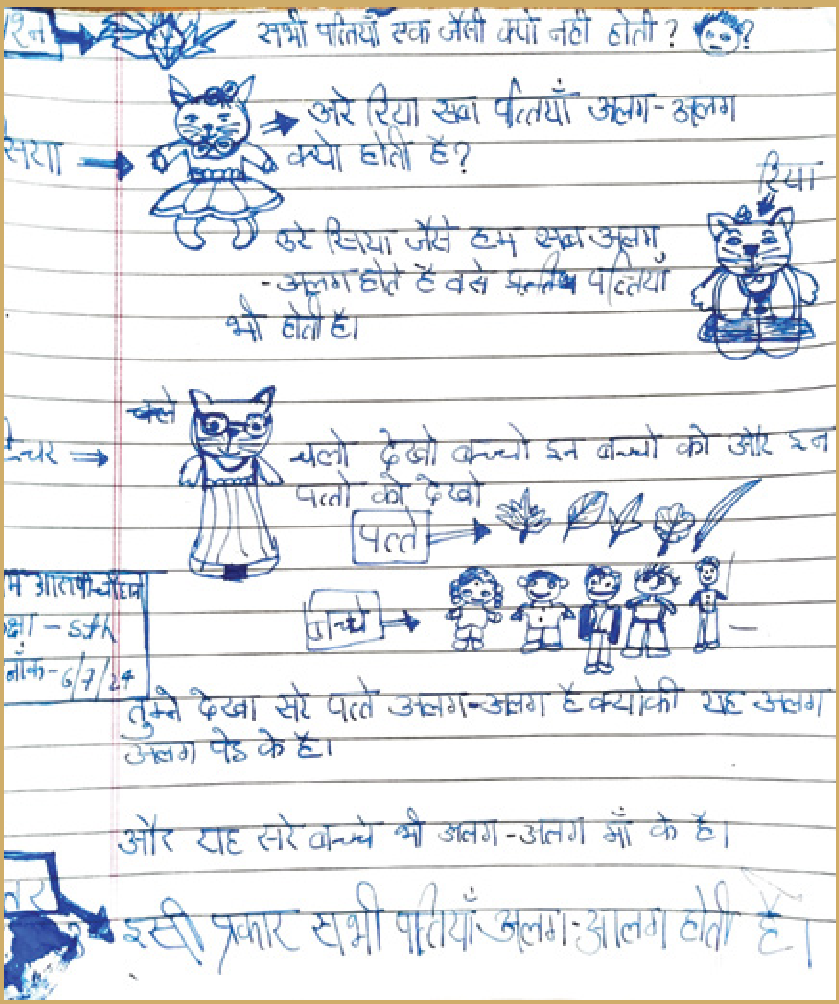

चित्र: कार्तिकी महामुलकर, आठवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

अक्षरा शुक्ला, चौथी, प्राथमिक विद्यालय परसऊँ, बीकेटी, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

प्रकृति को रंग-बिरंगा बनाने के लिए ईश्वर ने सारी चीज़ें अलग-अलग बनाई हैं।

परमेश्वरी निषाद, सातवीं, शासकीय पूर्व माध्यमिक शाला, बलोदी, बलौदा बाज़ार, छत्तीसगढ़

अगर सभी पेड़ एक जैसे होते तो हमें कैसे पता चलता कि यह पेड़ नीम का है या बरगद का। जैसे कि यदि हम सबके चेहरे सेम होते तो हमें कैसे पता चलता कि ये सीमा है, ये आँचल है, ये शिवानी है। अगर सभी पेड़ एक जैसे होते तो चिड़ियों को कितनी परेशानी होती। वो कैसे खोजतीं कि उनका घोंसला कहाँ है।

वेदांश ग्रोवर, पाँचवीं, गिर, शिव नाडर स्कूल, नोएडा, उत्तर प्रदेश

मुझे लगता है कि सभी पत्तियाँ एक जैसी इसलिए नहीं होतीं क्योंकि वह भी सोचती होंगी कि जैसे लोग एक गेम या एक चीज़ बार-बार करते हैं या खेलते हैं तो उनका मन भर जाता है। इसलिए जब लोग मुझे बार-बार एक ही जैसी देखेंगे तो उन्हें अच्छा नहीं लगेगा। तभी उन्हें खयाल आया होगा कि क्यों ना मैं अपना आकार, खुशबू और रंग बदल लूँ। हो सकता है इसीलिए सारी पत्तियाँ एक जैसी नहीं होतीं।

आयुष सिंह रावत, सातवीं, आरोही बाल संसार, प्यूड़ा, नैनीताल, उत्तराखण्ड

सभी पत्ते एक जैसे इसलिए नहीं होते क्योंकि कॉपी-पेस्ट नॉट अवेलेबल। पत्तियों की भी फैमिली होती है, जिसमें मम्मी-पापा, बहन-भाई या फिर कोई और होते हैं। जैसे इन्सानों के मम्मी-पापा, भाई-बहन हम सब तो अलग-अलग होते हैं। हमारी हाइट, वेट, बॉडी स्ट्रक्चर सब अलग-अलग होता है। वैसे ही पत्तियों की भी अपनी अलग-अलग फैमिली होती है। कुछ जुड़वाँ भी होती हैं, इसीलिए तो एक जैसी दिखती हैं।

लक्ष्मी, पाँचवीं, अपना स्कूल, तातियागंज, कानपुर, उत्तर प्रदेश

सभी पेड़-पौधों के वास स्थान अलग-अलग होते हैं। कुछ पत्तियों का वास स्थान पानी में, कुछ का मरुस्थलीय भागों में और कुछ का पर्वतीय क्षेत्रों आदि में होता है। पानी में होने वाले पौधों के पत्तों की सतह मोम जैसी चिकनी होती है। इससे पत्ती सड़ती नहीं है।

पर्वतीय पेड़-पौधों की पत्तियाँ नुकीली होती हैं जिसके कारण गिरने वाली बर्फ पत्तियों पर नहीं रुक पाती। और पत्ती सदैव हरी-भरी रहती है। मरुस्थलीय पेड़-पौधों में पाई जाने वाली पत्तियाँ काँटों में परिवर्तित हो जाती हैं। ऐसा करने से पौधा कम पानी में भी जीवित रह पाता है। इसी कारण सभी पत्तियाँ एक जैसी नहीं होतीं और सभी पेड़ों के अपने-अपने जैव-रासायनिक गुण हैं और आनुवांशिक गुणों के कारण सभी पत्तियाँ एक जैसी नहीं होतीं।

चित्र: वृन्दा मेहरा, पाँचवीं, रणथम्भौर, शिव नाडर स्कूल, नोएडा, उत्तर प्रदेश

नीतिश कुमार, नौवीं, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी, छत्तीसगढ़

उनके खानपान में कोई गड़बड़ी होती होगी। कुछ पत्ते ज़्यादा खाना खाते होंगे, तो वे बड़े हो जाते होंगे। कुछ कम खाते होंगे तो वे छोटे रह जाते होंगे। मुझे लगता है वे दोस्त होते हैं। अगर वे एक जैसे दिखेंगे तो एक-दूसरे को पहचान नहीं पाएँगे।

चित्र: अर्णवी पाटील, छठवीं, महिन्द्रा वर्ल्ड स्कूल, चंगलपेट, तमिलनाडु

अन्विता जोशी, चौथी, महिन्द्रा वर्ल्ड स्कूल, चंगलपेट, तमिलनाडु

बगीचे में तरह-तरह के पौधे लगे हैं। सबकी पत्तियाँ अलग-अलग दिख रही थीं। मैं सोच में पड़ गई कि ऐसा क्यों है। कुछ पत्तियाँ हरी हैं, तो कुछ लाल, कुछ सफेद-सी हैं तो कुछ गहरे हरे रंग की। पत्तियों का रंग और आकार हमेशा जगह, तापमान, मिट्टी इन चीज़ों पर निर्भर करता है। घर के अन्दर होने वालों पौधों में हरा रंग कम होता है क्योंकि उन्हें सूर्य के प्रकाश की ज़्यादा ज़रूरत नहीं होती। पत्तियों को पौधों की रसोई बोलते हैं। पत्ते पौधों को खाना बनाने में मदद करते हैं। छोटी-बड़ी, गोल-नुकीली, लाल-पीली, हरी-गहरी हरी ऐसी अनेक प्रकार की पत्तियाँ बगीचे में दिखती हैं। सबके अपने-अपने गुण होते हैं। और यह विविधता बगीचे की सुन्दरता बढ़ाती है।

ईशान्त प्रताप, आठवीं, सीख समूह, स्वतंत्र तालीम फाउंडेशन, मलसराय केन्द्र, सीतापुर, उत्तर प्रदेश

पेड़ की पत्तियाँ उसे पेड़ के तने पर आधारित होती हैं। जिन पेड़ों के तने कमज़ोर, नाज़ुक व पोले होते हैं उनकी पत्तियाँ बहुत ज़्यादा बड़ी होती हैं, जैसे कि सागवान, केला, पपीता। और जिन पौधों का तना ठोस व मज़बूत होता है उनकी पत्तियाँ छोटी होती है, जैसे कि नीम, बबूल, शीशम व इमली आदि। जिन पौधों के तने में काँटे होते हैं उनकी पत्तियाँ ऊपर से मुलायम और निचले हिस्से में खुरदुरी होती हैं। कुछ पेड़ों की पत्तियाँ उस स्थान की मौसम व जलवायु से निर्धारित होती हैं।

ओम, तीसरी, दीपालया कम्युनिटी लाइब्रेरी, गोलाकुआँ, दिल्ली

यदि सारे पत्ते एक जैसे हो जाएँगे तो बहुत-से जानवर घटेंगे और बहुत-से जानवर कम भी हो जाएँगे। जानवरों को अपनी पसन्द के पत्ते खाने को नहीं मिलेंगे। एक जैसे पत्ते होने पर ज़्यादातर पेड़ काट दिए जाएँगे।

चित्र: ईश्वरी अडसूल, पाँचवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

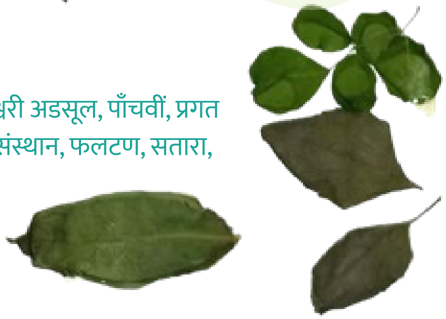

अर्पिता चौहान, बारहवीं, किलकारी बिहार बाल भवन, पटना, बिहार

सभी पत्तियाँ एक जैसी इसलिए नहीं होतीं क्योंकि इस सृष्टि में सबकी अपनी-अपनी भूमिका है। सभी एक-दूसरे से भिन्न हैं, पर सबकी अपनी-अपनी प्रतिभा और विशेषता है।

झील कर्णे, आठवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

पेड़ों की पत्तियाँ अलग-अलग होती हैं। क्योंकि जैसे हमारी अलग-अलग हेयरस्टाइल होती है, वैसे ही उनकी भी लीफस्टाइल होती है। हर पेड़ की पत्तियों का लीफस्टाइल अलग-अलग होता है। उन्हें भी अपनी पसन्द का लीफस्टाइल रखने का हक है।

स्पन्दिता, नौवीं, हेरिटेज एक्सपीरियंशल लर्निंग स्कूल, गुड़गाँव, हरयाणा

पत्तियों के विभिन्न आकारों और आकृतियों का मुख्य कारण उनके प्राकृतिक फंक्शन और जीवनशैली से जुड़ा होता है। प्राकृतिक प्रक्रियाएँ जैसे कि फोटोसिंथेसिस और शारीरिक संरचना पत्तियों के आकार और आकृतियों को प्रभावित करती हैं। जहाँ धूप की रोशनी कम होती है, वहाँ पत्तियों का आकार और पत्तियों की संख्या बढ़ जाती है ताकि वे उपस्थित धूप को स्वीकार कर सकें। इसी तरह, जहाँ पानी की कमी होती है, वहाँ पत्तियों का आकार छोटा होता है ताकि पानी को बचा सकें।

विभिन्न प्रकार के पत्तियों की आकृतियों व साइज़ में इस तरह की विविधता एक समृद्ध और स्थिर पारिस्थितकी निर्माण का परिणाम होती है। यह सुनिश्चित करता है कि पेड़-पौधे अपने पर्यावरण के अनुकूल हों और अपनी जीवन प्रक्रियाओं को सही ढंग से सँभाल सकें। इसी कारण से हम देखते हैं कि अलग वनस्पति अपनी खास आकृतियों के साथ अपनी पहचान बनती हैं।

आज़ाद, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, मातली, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

अगर सभी पत्तियाँ एक जैसी हों तो जानवर रोज़ एक ही पत्ती नहीं खाएँगे। एक जैसी पत्तियाँ अच्छी नहीं लगतीं। और अलग-अलग पत्तियाँ अच्छी लगती हैं। और फिर मधुमक्खी भी वहाँ छत्ता नहीं बनाएगी।

आसिफ अंसारी, छठवीं, लारी प्रोजेक्ट, चकमक क्लब, ग्राम भियापुर, रायसेन, मध्य प्रदेश

सभी पेड़ अलग-अलग होते हैं। इसलिए सभी पेड़ की पत्तियाँ भी अलग-अलग होती हैं।

चित्र: जयन्ती फर्स्वाण, बारहवीं, लक्ष्मी आश्रम, कौसानी, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

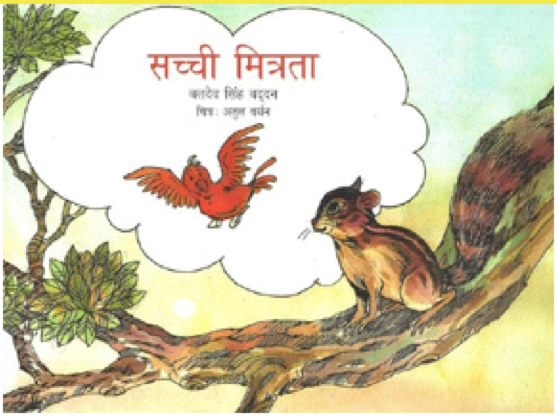

सच्ची मित्रता
लेखक: बलदेव सिंह बद्दन
चित्रकार: अतुल वर्धन
भाषा: हिन्दी
प्रकाशक: नेशनल बुक ट्रस्ट
प्रकाशक: प्रिंसी यादव, सातवीं, शासकीय माध्यमिक शाला जेरवारा, सागर, मध्य प्रदेश

यह मेरी प्रिय पुस्तक है। जब मैंने यह पुस्तक पढ़ी तो मन को बहुत अच्छा लगा। यह कहानी पढ़कर मुझे आभास हुआ कि कोई चिड़िया मुझे चीं-चीं करके बुला रही है। मुझे इस पुस्तक से अनुभव मिला है कि अपने अध्यापक की बात माननी चाहिए और उनकी किसी भी बात का बुरा नहीं मानना चाहिए। कहानी में सौरभ, शिप्रा, चिड़िया और गिलहरी इन चारों की मित्रता तो मेरे मन में ही छा गई। हमें भी ऐसी ही मित्रता निभानी चाहिए ताकि मुसीबत आने पर हम अपने दोस्तों का साथ दे सकें।

कहानी के चित्र और लिखावट भी बहुत अच्छे लगे। मुझे लगा कि अगर हम शिप्रा व सौरभ की तरह नेक विद्यार्थी बन जाएँ तो हमें अच्छा लगेगा। प्रार्थना सभा में शिप्रा व सौरभ को इनाम मिलता देख मेरे मन यह भाव जागा कि मैं भी ऐसे अच्छे कार्य करना चाहती हूँ और इनाम पाना चाहती हूँ।

इस कहानी में जानवरों और इन्सानों के बीच चले आ रहे तालमेल को दिखाया गया है। मुझे इस कहानी में सबसे अच्छी बोन बीबी और शाह जौंगोली लगे क्योंकि वह दोनों मिलकर जंगल और इन्सानों की मदद करते हैं। उस सुन्दरबन के जंगल में एक राक्षस का आतंक छाया हुआ था, जिसका नाम दोक्खिन राय था। मुझे कहानी के अन्त में पता चला कि जो भी वह इन्सानों को डराने के लिए कर रहा था वो उसकी मजबूरी थी क्योंकि इन्सान जंगल में आकर शहद, फल, सब्ज़ियाँ, मछली एवं अन्य खाने का सामान लेकर चले जाते। जिसके कारण जंगल के जानवर भूखे मर रहे थे। यह कहानी हमें यह बताती है कि ज़रूरत से ज़्यादा पर्यावरण से कुछ नहीं लेना चाहिए। मुझे यह कहानी पढ़कर बहुत अच्छा लगा।

बोन बीबी के बन में
लेखक: संध्या राव
चित्रकार: प्रोइति राय
भाषा: हिन्दी/अँग्रेज़ी
प्रकाशक: तूलिका प्रकाशन
समीक्षा: सौरव, दीपालया कम्युनिटी लाइब्रेरी, गोलाकुआँ, दिल्ली

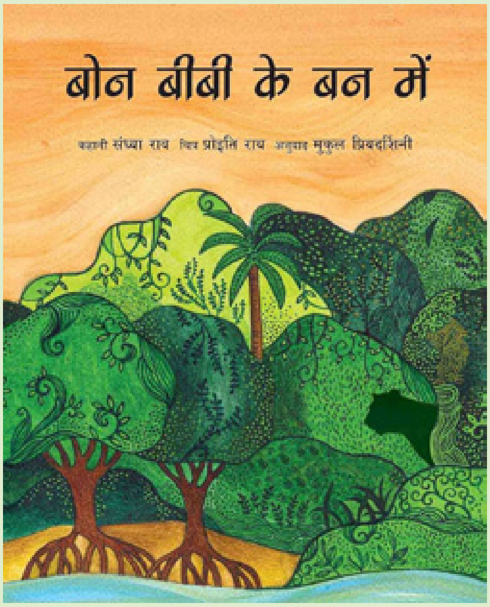

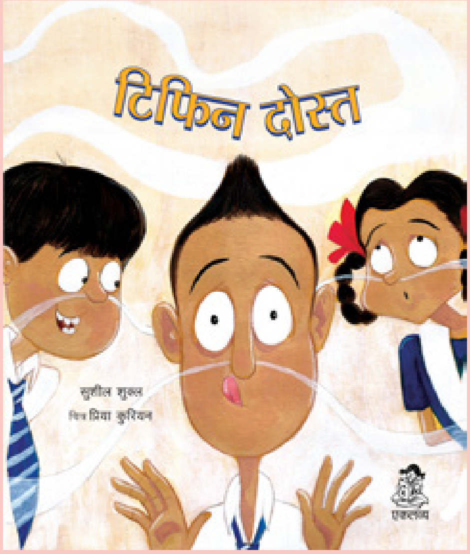

टिफिन दोस्त
लेखक: सुशील शुक्ल
चित्रकार: प्रिया कुरियन
भाषा: हिन्दी
प्रकाशक: एकलव्य फाउंडेशन
समीक्षा: द्युति, चौथी, फातिमा स्कूल, बलरामपुर, उत्तर प्रदेश

मैंने एक किताब पढ़ी जिसका नाम *टिफिन दोस्त* है। यह किताब जब मैंने देखी तो इसका किरदार मेरी सहेली के भाई जैसा दिखता है। मुझे इसको देखकर मन करा कि काश मेरे विद्यालय में भी सीट एक्सचेंज करने को मिलती। मेरी भी एक दोस्त सारा है। मैं उससे कभी-कभी लंच शेयर कर पाती हूँ। लेकिन वो कभी-कभी नॉनवेज लाती है, जो मैं नहीं खाती हूँ।

जलवायु परिवर्तन - भाग 2

विनता विश्वनाथन

मई 2024 के अंक में हमने देखा था कि मौसम और जलवायु में अन्तर क्या है। संक्षेप में कहें तो मौसम की बात जब होती है तो हम कुछ घण्टों, दिन के मौसम या फिर ज़्यादा से ज़्यादा कुछ सालों की बात कर रहे होते हैं। लेकिन जलवायु किसी जगह के तीस साल या उससे भी ज़्यादा समय का मौसम होता है। हमने यह भी समझा था कि कुछ सालों के मौसम में उतार-चढ़ाव के आधार पर हम यह नहीं कह सकते कि जलवायु बदली है। इसके लिए कम से कम कुछ दशकों के लिए मौसम में बदलाव होने की ज़रूरत है। इसे एक उदाहरण के साथ समझते हैं। क्यों ना पिछले 2-3 दशकों के दौरान पृथ्वी के मौसम को ही देखा जाए।

काफी समय से पृथ्वी का तापमान बढ़ता जा रहा है (चित्र 1)। ये हम इसलिए जानते हैं क्योंकि हमारे पास लगभग 140 सालों से (1880 के दशक से) पृथ्वी के तापमान के माप हैं। शुरू में तो पृथ्वी की अलग-अलग जगहों पर हम थर्मामीटर लगाकर हाथ से तापमान दर्ज करते थे। आजकल सैटेलाइट्स के ज़रिए ये आँकड़े हमें मिल जाते हैं। (पृथ्वी के औसत तापमान का गणित कैसे किया जाता है, इसके बारे में बाद में बात करेंगे।)

चित्र 1 से समझ में आता है कि तापमान तो बढ़ता ही जा रहा है। क्यों और कैसे – इसका भी हमें पता है। सूरज की रौशनी जब पृथ्वी पर पड़ती है, तो उसका कुछ हिस्सा अन्तरिक्ष में वापस परावर्तित हो जाता है, खासकर चमकदार सतहों से जैसे कि बर्फ और बादलों से। बाकी की रौशनी पृथ्वी की सतह और वायुमण्डल सोख लेते हैं। इन हिस्सों से काफी सारी ऊर्जा का विकिरण ऊष्मा के रूप में होता है, यानी कि ये वापस वायुमण्डल में चले जाते हैं। यदि किसी कारण इस ऊष्मा की मात्रा में उतार-चढ़ाव होता है तो उसका असर पृथ्वी की जलवायु पर भी होता है।

पहले एक लम्बे समय यानी कि 1951 से 1980 की पृथ्वी की सतह के औसत तापमान का पता लगाया गया। फिर इस तापमान से हर साल के पृथ्वी के औसत सतही तापमान में जो बदलाव हुआ उसे दर्ज किया। इसे temperature anomaly भी कहते हैं और इसे खड़े अक्ष पर बताया गया है (चित्र 1)। सालों को आड़े अक्ष पर बताया है। अब 1900 साल के बिन्दु को देखो, ये बदलाव 0-0.5°C उल्टी दिशा में है। मसलन लम्बे समय के औसत तापमान से उस साल का तापमान कम था। इसी तरह साल 2000 के बिन्दु को देखो तो पाओगे कि उस साल पृथ्वी का तापमान लम्बे समय के औसत तापमान से लगभग 0.5°C ज़्यादा था। वैसे 2023 में पृथ्वी का औसत सतही तापमान 1880 से अभी तक के समय में सबसे ज़्यादा था। कुल मिलाकर 2023 में पृथ्वी 1850-1900 के समय से लगभग 1.36°C ज़्यादा गर्म थी। और यह भी निश्चित है कि पिछले 10 साल सबसे ज़्यादा गर्म रहे हैं।

अगर पृथ्वी की सतह से सारी ऊष्मा वायुमण्डल से होते हुए अन्तरिक्ष में वापस चली जाती तो पृथ्वी का तापमान बहुत ही कम होता। लेकिन वाष्प, कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी कुछ गैसों के वायुमण्डल में होने के कारण ऊष्मा

चित्र 1. यह चित्र समय के साथ पृथ्वी के सतही तापमान में हुए बदलाव को दर्शाता है।

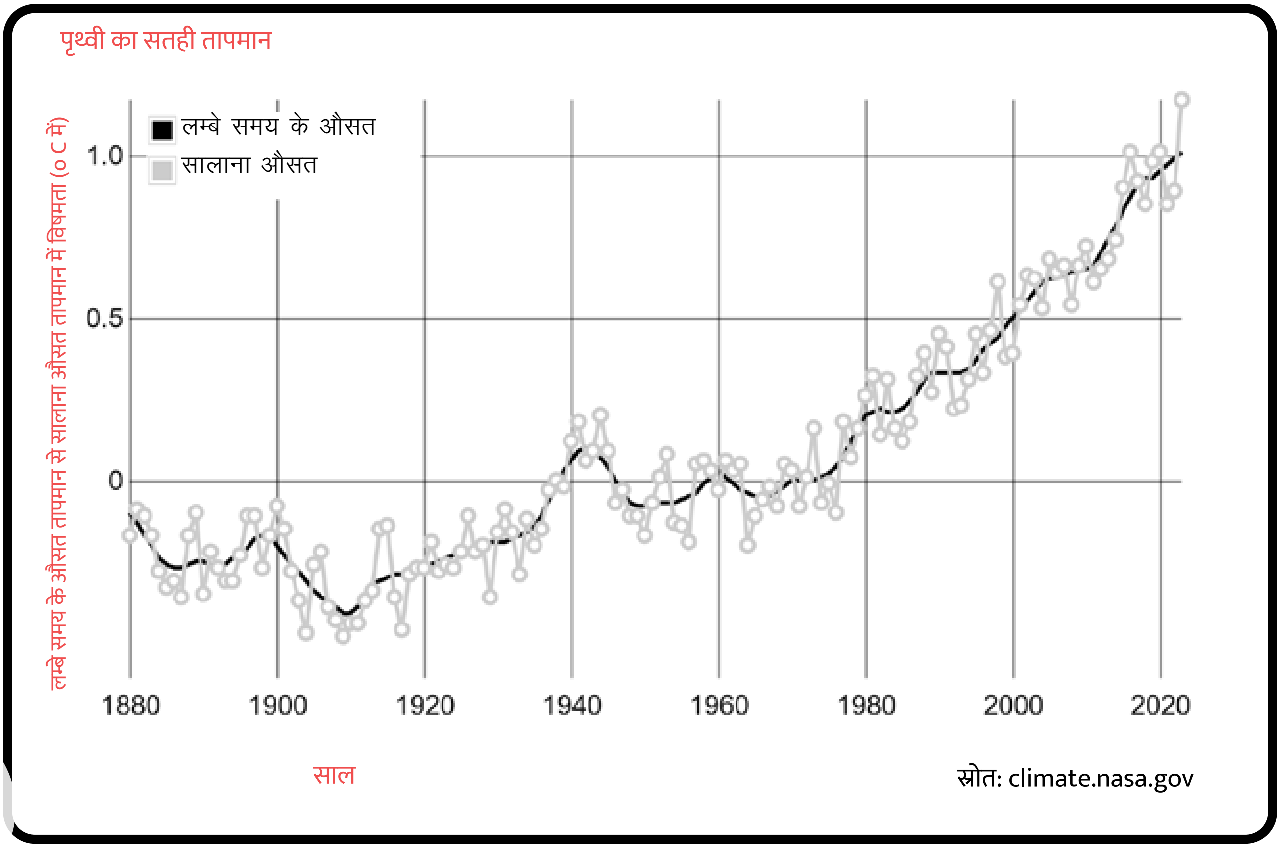

का कुछ हिस्सा वायुमण्डल और पृथ्वी की सतह के बीच ही रह जाता है। इसे ग्रीनहाउस इफ़ैक्ट कहते हैं और इन गैसों को ग्रीनहाउस गैस। जब तक अन्तरिक्ष में चली जाने वाली ऊष्मा पृथ्वी तक सीमित रहने वाली ऊष्मा से कम है तब तक पृथ्वी पर गर्मी बनी रहती है। ये कुछ ऐसा ही है जैसे कि हम कम्बल ओढ़ते हैं और गर्म महसूस करते हैं (चित्र 2)।

अब हो यूँ रहा है कि पिछले करीब 200 सालों से मनुष्य की करतूतों (जैसे कि पैट्रोल-डीज़ल जलाना, वनों को जलाना इत्यादि) के कारण इन ग्रीनहाउस गैसों की, खासकर कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा वायुमण्डल में तेज़ी-से बढ़ती जा रही है। इसके कारण पृथ्वी के इर्द-गिर्द बना गैस का ये कम्बल ऊष्मा को रोकने में बेहतर होता जा रहा है। और इस तरह पृथ्वी का तापमान बढ़ता जा रहा है।

ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा क्यों और कैसे बढ़ रही है, इस पर और अन्य कुछ मुद्दों पर इत्मिनान से बातचीत अगली बार...

चित्र 2. ग्रीनहाउस गैसें पृथ्वी को कुछ ऐसे ही गर्म करती हैं, जैसे कम्बल हमें।

https://nexusmedianews.com/climate-change-comic-strip/ से साभार।

भाग - 4

मेहमान जो कभी गए ही नहीं

आर एस रेश्नू राज, ए पी माधवन, टी आर शंकर रमन, दिव्या मुडप्पा, अनीता वर्गीस और अंकिला जे हिरेमथ

रूपान्तरण व अनुवाद: विनता विश्वनाथन

चित्र: रवि जाम्भेकर

अन्य देश से आए और हमारे देश में सफलता से बसे हुए आक्रामक पौधों की सीरिज़ की अगली कड़ी...

यह एक छोटा सदाबहार पेड़ है जो 10-15 मीटर की ऊँचाई तक बढ़ सकता है। पश्चिमी घाट में इसे समुद्र तट से 1000 मीटर की ऊँचाई पर और पश्चिम बंगाल में 900-1900 मीटर की ऊँचाई पर पाया गया है। इसका तना लकड़ी का होता है। इसके संयुक्त पत्तों के पत्रक सँकरे, अण्डाकार व नुकीले सिरों वाले होते हैं। कसोद के फूल पीले होते हैं जो आकार में बड़े और आकर्षक होते हैं। यह गुच्छों में लगे होते हैं। इसकी फलियाँ लम्बी, बेलनाकार होती हैं और बीज कत्थई रंग के होते हैं।

इस पेड़ के कुछ खास गुण हैं। यह तेज़ी-से उगता है और प्रचुर मात्रा में बीज पैदा करता है। इसमें तेज़ी-से पुनःउत्पन्न होने की काबिलियत है। काटने पर यह दोबारा उग जाता है। इसके बीज कई जंगली शाकाहारी जानवरों द्वारा फैलाए जाते हैं, जिनमें हाथी भी शामिल हैं।

कसोद (पॉपकॉर्न पेड़)

वैज्ञानिक नाम: *सेन्ना स्पैक्टैबिलिस* (*Senna spectabilis*)

मूल: दक्षिण और मध्य अमेरिका

कैसे पहुँचा: एक सजावटी पौधे के तौर पर भारत में लाया गया।

असर

यह जंगलों में स्थानीय पौधों की किस्मों को उगने नहीं देता है और पानी के लिए प्रतिस्पर्धा करके फसलों की पैदावार को भी रोकता है।

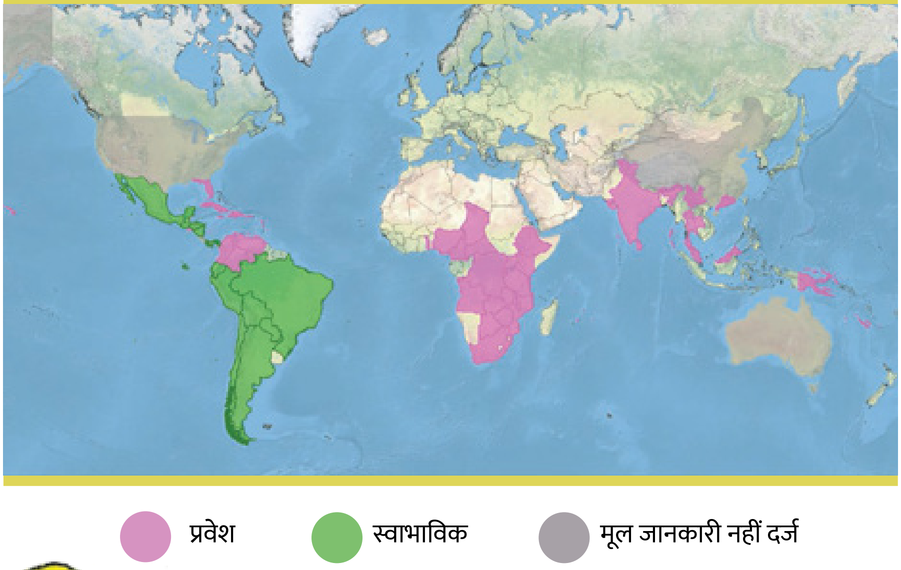

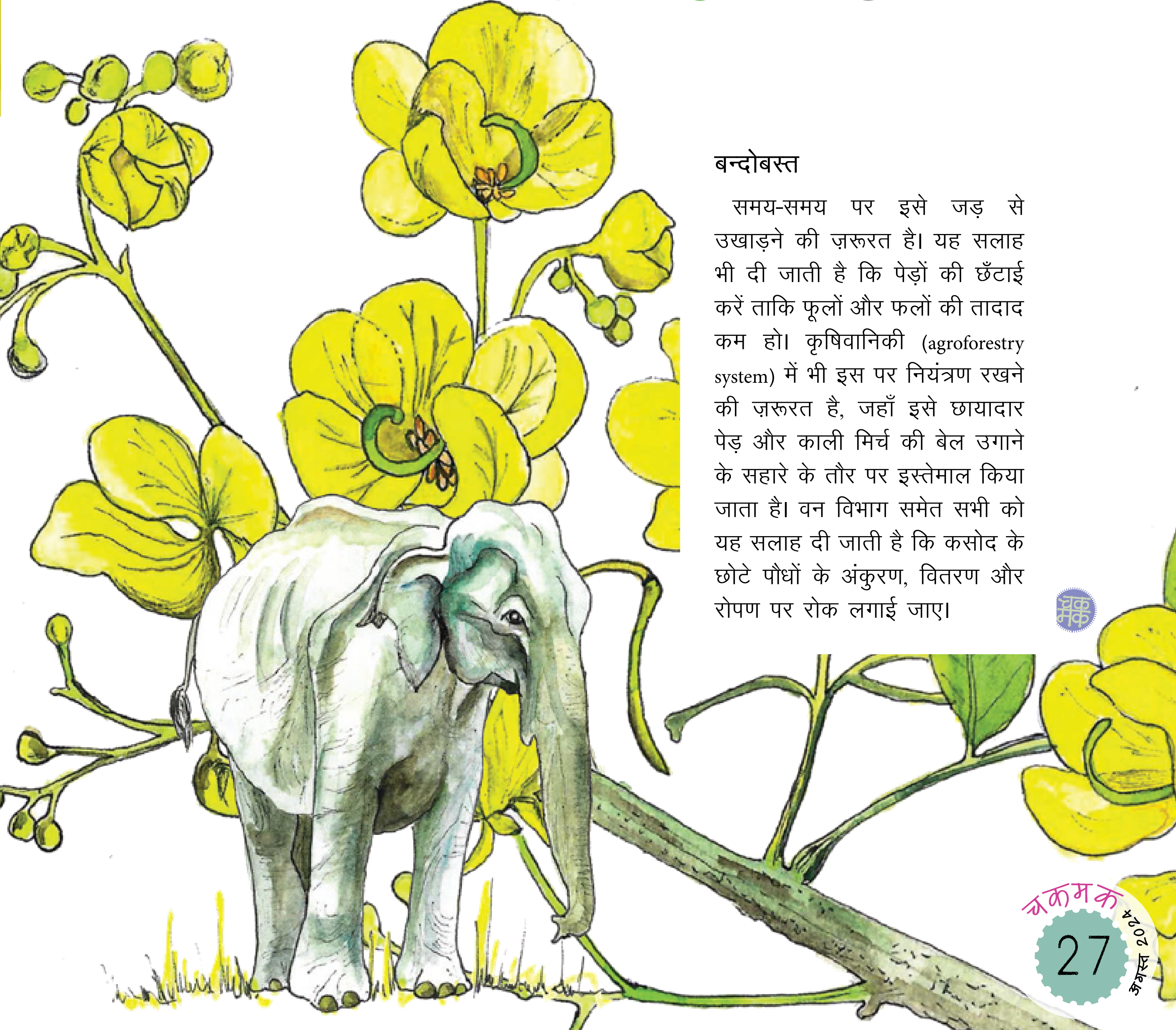

बन्दोबस्त

समय-समय पर इसे जड़ से उखाड़ने की ज़रूरत है। यह सलाह भी दी जाती है कि पेड़ों की छँटाई करें ताकि फूलों और फलों की तादाद कम हो। कृषिवानिकी (agroforestry system) में भी इस पर नियंत्रण रखने की ज़रूरत है, जहाँ इसे छायादार पेड़ और काली मिर्च की बेल उगाने के सहारे के तौर पर इस्तेमाल किया जाता है। वन विभाग समेत सभी को यह सलाह दी जाती है कि कसोद के छोटे पौधों के अंकुरण, वितरण और रोपण पर रोक लगाई जाए।

1. खाली खानों में ऐसी संख्याएँ भरो जिन्हें कोने में दिए गए चिह्न के साथ इस्तेमाल करने पर दी गई संख्याएँ मिल जाएँ। ध्यान रहे कि तुम्हें इस चिह्न का इस्तेमाल पंक्ति व कॉलम दोनों में दी गई संख्याओं के साथ करना है।

		120
		96
144	80	X

2. दो सीधे कट लगाकर इस फूलदान को 3 ऐसे भागों में काटना है जिन्हें जोड़ने पर चौकोर बन जाए। कैसे कर सकते हैं?

3. शिल्पी मैडम ने एक गतिविधि कराने के लिए अपनी क्लास के बच्चों को 3-3 के समूह में बाँटा। हरेक समूह ने अपनी गतिविधि में 9 तस्वीरों का इस्तेमाल किया। अगर कुल 585 तस्वीरें इस्तेमाल हुई हों तो बताओ कि क्लास में कुल कितने बच्चे थे?

4. दी गई ग्रिड में कई सारी सब्ज़ियों के नाम छिपे हुए हैं। तुमने कितने ढूँढे?

जा	प	स	दी	पा	से	म	नी	श
अ	द	र	क	ल	क	ट	ह	ल
र	प्या	सों	व	क	पी	र	ते	ज
बी	ज़	मे	दो	ल	म	श	रू	म
लौ	की	बैं	थी	ह	ट	क	टि	ला
ब	थु	आ	ग	सु	मा	गा	ण्डा	मि
र	स	ह	ज	न	ट	क	ज	पा
ब	भिं	चु	कं	द	र	रे	नी	र
टी	ण्डी	आ	पा	शि	म	ला	मि	र्च

5. एक झोले में लाल, हरे व पीले रंग के कुल 60 गुब्बारे हैं। लाल गुब्बारों की संख्या हरे गुब्बारों कीं 4 गुनी है। पीले गुब्बारों की संख्या हरे गुब्बारों से 6 ज़्यादा है। तो बताओ कि हर रंग के कितने गुब्बारे हैं?

6. प्रश्न वाली जगह में कौन-सी संख्या आएगी?

9, 25, 49, 81, ?, 169

माथापच्ची

7\. सिर्फ दो तीलियों को इधर-उधर करके इस समीकरण को ठीक करना है। कैसे करोगे?

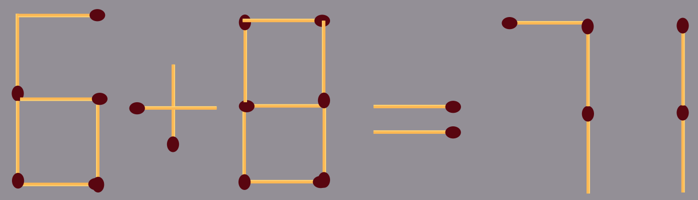

8\. इस चित्र में तुम्हें कितने बॉक्स दिखाई दे रहे हैं?

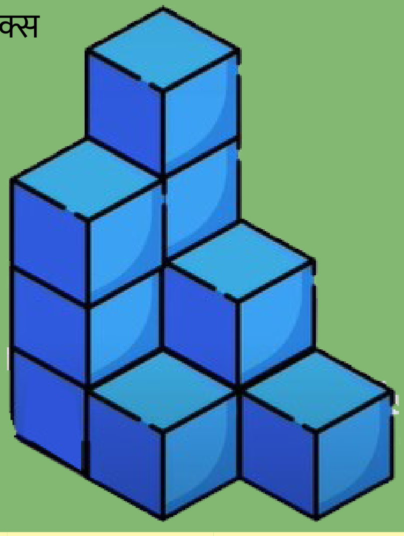

9\. दी गई ग्रिड की हर पंक्ति व हर कॉलम में अलग-अलग रंग का सूअर आना चाहिए। इस शर्त के आधार पर खाली जगहों में कौन-सा सूअर आएगा?

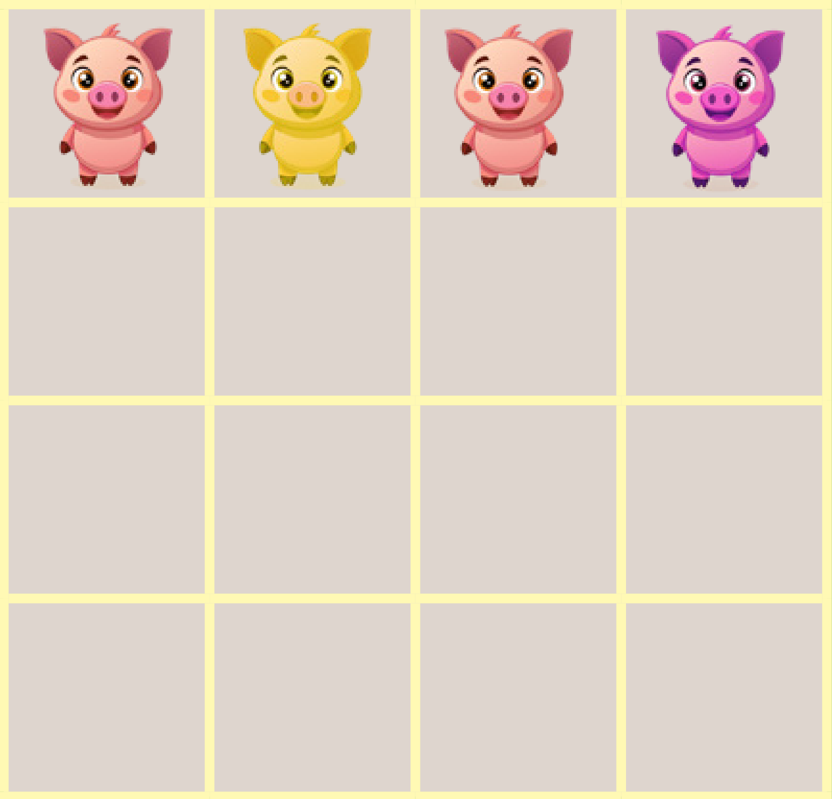

फटाफट बताओ

कौन है जिसके पास कभी तो दर्जनों कपड़े होते हैं, और कभी एक भी नहीं होता?

([illegible])

रात में है, दिन में नहीं
दिये के नीचे है, ऊपर नहीं

(अँधेरा)

खुद कभी वह कुछ न खाए
लेकिन सब को खूब खिलाए

(चम्मच)

क्या है जो बिना पैरों के चला जाता है और फिर वापिस नहीं आता??

([illegible])

इन्सान युगों से मुझे मिटाने में लगा है, मगर मैं मिटकर भी मिट नहीं पाई। बताओ मैं कौन हूँ?

([illegible])

एक रुमाल के 4 कोने हैं। 1 कोना काट दें तो कितने कोने बचेंगे?

(5 कोने)

अन्तिम दोनों पहेलियाँ उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी ज़िले के अज़ीम प्रेमजी स्कूल के कक्षा 4 के छात्र आज़ाद ने भेजी हैं।

जवाब पेज 42 पर

जंगली जी

कहानी व चित्र: नेहा बहुगुणा

ये कहानी तब की है जब स्मार्टफोन इतने कॉमन नहीं थे। और लोग सफर में अपने साथ बैठे यात्रियों से बात कर लिया करते थे। खिड़की के बाहर के दृश्यों को इंस्टाग्राम लाइक्स के रूप में नहीं, बल्कि सच में मज़ा लेने के लिए देखते थे। मतलब बात ज़्यादा पुरानी नहीं है, लेकिन लगता है जैसे हम सदियों आगे आ गए हैं।

खैर, उस समय मेरा स्कूल खतम ही हुआ था। मुझे आगे की पढ़ाई के लिए देहरादून भेज दिया गया था। वहाँ रहते हुए मैंने बस में अकेले आना-जाना शुरू कर दिया था। पर मुझे लोकल बसों में सफर करना बिलकुल पसन्द नहीं था। क्योंकि पेट्रोल के धुएँ और बस के अन्दर आने वाली अजीब-सी बदबू से मेरा सिर चकराने लगता। लेकिन बस में ड्राइवर के पास बोनट के ऊपर वाली जगह मानो मेरी सारी समस्याओं का हल हुआ करती थी। वहाँ पर न सीट होती, न ही गद्दी। बोनट भी गरम ही रहता, मगर वहाँ बैठने से न सिर्फ मुझे बड़े-बड़े काँच से दूर-दूर के नज़ारे देखने को मिलते, बल्कि ऐसा लगता कि जैसे मैं ही बस चला रही हूँ। एक ऊँचाई पर लगभग उड़ते हुए सफर करने का अनुभव होता था।

तो ऐसे ही एक बार मुझे बस से घर जाना था। और मेरा टारगेट था बोनट। अपनी मासूम शक्ल और पतले शरीर का फायदा उठाकर मैं वहाँ जा

बैठी। लोगों को लगता था कि मैं सातवीं-आठवीं में पढ़ने वाली कोई बच्ची हूँ। इसलिए कोई मना भी नहीं करता था। लेकिन उस दिन कंडक्टर ने मुझे वहाँ से उठा दिया क्योंकि उस दिन बोनट के ऊपर जगह-जगह बाँटे जाने वाले अखबार, डाक इत्यादि रखे जाने थे।

मैं बेमन से ड्राइवर के बिलकुल पीछे वाली सीट में बैठ गई। बस में वही एक खाली सीट बची थी। और मेरे बगल की खिड़की वाली सीट पर एक बूढ़ा आदमी बैठा था। बूढ़े व्यक्ति को पहाड़ी बोली में 'बौड़ा' कहते हैं। बौड़ाजी खिड़की से बाहर देख रहे थे और बार-बार अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए ऐसे सिर हिला रहे थे मानो पहाड़ों और पेड़ों से बतिया रहे हों। मुझे लगा कि मेरे सफर का अनुभव तो गया तेल लेने। इसलिए मैं हाथ बाँधकर सोने की कोशिश करने लगी। सोचा, कम से कम उलटी वगैरह तो नहीं आएगी। तभी बौड़ाजी की आवाज़ आई, "अच्छा किया तुझे यहाँ बिठा दिया। गाड़ी में एक ज़ोर का ब्रेक लगता तो तू सीधे सड़क पे पहुँच जाती। गाड़ी से भी आगे।" कहकर बौड़ाजी मुस्कराए।

मैंने सोचा बात शुरू करने के लिए ज़रूरी नहीं है कि हमेशा उल्टी बात ही सोचो। और इन्हें क्या पता आगे बैठकर मेरा दिमाग कितना तेज़ हो जाता है। पर अब इस बौड़ा को क्या समझाना। इसलिए मैंने मुस्कराकर सिर हिला दिया ताकि आगे बात करने के लिए कुछ बचे ही नहीं। लेकिन मुझे देखकर बौड़ा को लगा कि मैं शायद स्कूल से भागकर छुट्टी मनाने जा रही हूँ। इसलिए उन्होंने पूछा, "कहाँ की तैयारी है बेटा? अभी तो स्कूल खतम नहीं हुआ होगा।" फिर मुझे उन्हें बताना ही पड़ा कि मेरी स्कूल की पढ़ाई पूरी हो चुकी है। और अब मैं ग्रेजुएशन करने जा रही हूँ। "अच्छा।" कहकर बौड़ाजी ने आश्चर्य व्यक्त किया और आगे कहा, "फिर तो तुम मास्टरनी बन ही सकती हो। विद्या बाँटना बहुत पुण्य का काम है। हम तो ऐसे ही रह गए गँवार किसान।"

यह सुनकर मुझे गुस्सा आ गया। मैंने सोचा कि कहाँ मैं डिज़ाइन स्कूल में दाखिले के सपने देख रही हूँ और कहाँ ये बौड़ाजी अभी तक मास्टरों पर ही अटके हुए हैं। वैसे भी पहाड़ों में हर चौथा आदमी फौजी और हर दसवीं औरत मास्टरनी ही तो बन जाते हैं। खुद को इतना आम समझे जाने पर मुझे खीज हो रही थी। एक तो ये काल कोठरी और ऊपर से बौड़ाजी की जेलर जैसी पूछताछ। फिर भी मैंने मुस्कराते हुए कहा, "नहीं मुझे डिज़ाइनर बनना है।" मैंने सोचा कि अब तो बौड़ाजी की उत्सुकता शायद शान्त हो जाएगी। लेकिन उन्होंने आगे की पूछताछ जारी रखी।

"क्या करते हैं इसमें?"

मैंने कहा, "चित्र बनाते हैं, कपड़े के साथ भी काम करते हैं। अलग-अलग वस्तुएँ डिज़ाइन कर सकते हैं और कार्टून फिल्में भी बनाते हैं।"

बाकी तो पता नहीं लेकिन कार्टून बौड़ाजी की समझ में आया और वो थोड़ा कन्फ्यूज़ हो गए कि आखिर ये सब फालतू चीज़ें करने के पैसे कौन देगा। उसके बाद के 1-2 घण्टे मुझे उन्हें यही समझाने में निकल गए कि मैं दर्ज़ी, पेंटर और कारपेंटर की बात नहीं कर रही हूँ। आखिरकार मैंने उन्हें ये समझाकर चुप करवाया कि मैं अपने पहाड़ की संस्कृति को बचाने के लिए कार्य करूँगी।

थोड़ी ही देर में गाड़ी एक जगह चाय-नाश्ते के लिए रुकी। मैं और बौड़ाजी साथ ही एक चाय की दुकान में बैठ गए। बन्द गाड़ी के बाद खुली हवा में बैठकर चाय पीने का मज़ा ही निराला होता है। सामने ऊँचा पहाड़, पहाड़ों पर खड़े पेड़, नीचे बहती उजली नदी, झुरमुटों में छिपे मकान और सड़क के किनारे छोटे-छोटे

होटलों की लाइन। मैंने चाय के साथ फैन मँगवाया। फैन मतलब पंखा नहीं, ये खारी बिस्कुट जैसा एक बड़ा बिस्कुट होता है। और बौड़ाजी ने मँगवाया गरम दूध। फिर मुझसे कहा कि वो दूध के अलावा बाहर और कुछ नहीं खाते। मैंने सोचा, “हाँ, दिमाग तो खूब खाते हो बच्चों का।” फिर मैंने देखा कि बौड़ाजी दूध पीते समय कभी दाढ़ी को सँभालने की कोशिश कर रहे थे, तो कभी मूँछ को। लेकिन फिर भी उनकी मूँछ के बाल कहीं न कहीं से रास्ता निकालकर दूध के गिलास में घुस ही जाते। ये सारा तमाशा मैं बड़े ध्यान-से देख रही थी कि बौड़ाजी की नज़र मुझ पर पड़ी। वो बोले, “तू सोच रही होगी कि बौड़ा को दूध पीने का सगोर भी नहीं है। दाढ़ी-मूँछ सब को दूध पिला रहा है। घिन तो नहीं आ रही?” मैंने मुस्कराकर ना कर दिया।

“क्या है न थोड़ा-थोड़ा दूध दाढ़ी को पिलाते रहना चाहिए। स्वास्थ्य के लिए अच्छा रहता है।” कहकर बौड़ाजी ने खुद ही अपनी बात पर ज़ोर का ठहाका मारा। उनके जोक पर तो नहीं लेकिन उनकी बेपरवाह हँसी देखकर मैं भी हँस पड़ी। बौड़ाजी ने मुझे चाय-नाश्ते के पैसे नहीं देने दिए और फिर हम तुरन्त अच्छे दोस्त बन गए। अब मेरी बारी थी बौड़ाजी से पूछताछ करने की कि कहाँ से आ रहे हो? कहाँ जा रहे हो? वगैरह-वगैरह...

बौड़ा हँसते हुए बोला, “न कहीं जा रहा हूँ। न कहीं से आ रहा हूँ। बस में बैठकर तुझसे बतिया रहा हूँ।” और जो बात जो मैंने पहले कही थी कि पहाड़ में हर चौथा आदमी फौज में होता है, तो भाई बौड़ाजी भी पहले फौज में ही थे। उन्होंने बताया कि आजकल वो घर में ही हैं। मैंने सोचा कि इतनी आसानी से मैं थोड़ी जाने दूँगी। मुझे भी पता करना है कि आप घर में क्या करते हो और अकेले-अकेले देहरादून क्यों घूमने आए थे, इसलिए मैंने पूछताछ जारी रखी।

बौड़ाजी ने थोड़ा मुस्कराते हुए अपने बैग से एक फाइल निकालकर मेरी ओर बढ़ाई। फिर उन्होंने बताया कि वो देहरादून में एक पर्यावरण गोष्ठी के लिए आए थे। वहाँ उन्हें ज़िलाधिकारी द्वारा आमंत्रित किया गया था। पहले मैंने सोचा कि कुछ भी फेंक रहे हैं बौड़ाजी। लेकिन जब मैंने फाइल के पन्ने पलटने शुरू किए तो पता चला कि वे तो बड़े छुपे रुस्तम निकले।

दरअसल बौड़ाजी को लोग ‘जंगली जी’ के नाम से पुकारते थे। क्योंकि बौड़ाजी अपना आधे से ज़्यादा समय जंगलों में ही व्यतीत करते थे। और वो भी उनका खुद का लगाया हुआ जंगल। ये वो जंगल था जो बौड़ाजी ने चालीस हज़ार से अधिक पेड़ लगाकर कई सालों में बनाया था। हुआ यूँ कि उनके गाँव में फल-फूलों के ज़्यादा पेड़ नहीं थे। ज़मीन बंजर पड़ी थी। और जिस तरह के पेड़ वगैरह थे उन्हें खाने में प्रयोग नहीं किया जा सकता था। वन विभाग का मानना था कि जहाँ चीड़ का जंगल हो वहाँ दूसरी किसी प्रजाति का फलना-फूलना सम्भव नहीं है क्योंकि चीड़ के पेड़ों को बहुत पानी लगता है।

लेकिन जंगली जी ने अलग-अलग तरह के पेड़ों को एक जगह पर लगाया। शुरू-शुरू में उन्हें कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। मगर उन्होंने काम बन्द नहीं किया।

“जंगल में सब उग जाता है – चारा, फल, जड़ीबूटी। लोग काम करना ही नहीं चाहते।” बौड़ाजी ने कहा। “हमारे जंगल में तो अदरक, हल्दी, चाय और सन्तरे भी पैदा होते हैं।”

मुझे यकीन नहीं हो रहा था कि पहाड़ी बंजर वनों में खेती की फसल भी उग सकती है।

बौड़ा हँसते हुए बोला, “न कहीं जा रहा हूँ। न कहीं से आ रहा हूँ। बस में बैठकर तुझसे बतिया रहा हूँ।” और जो बात जो मैंने पहले कही थी कि पहाड़ में हर चौथा आदमी फौज में होता है, तो भाई बौड़ा जी भी पहले फौज में ही थे। उन्होंने बताया कि आजकल वो घर में ही हैं। मैंने सोचा, इतनी आसानी से मैं थोड़ी जाने दूँगी। मुझे भी पता करना है कि आप घर में क्या करते हो और अकेले-अकेले देहरादून क्यूँ घूमने आए थे, इसलिए मैंने पूछताछ जारी रखी।

“किताबी ज्ञान ठीक है, लेकिन हाथ-पाँव चलाएँगे तभी तो पता चलेगा कि काम होता है या नहीं। है ना?” बौड़ाजी बोले।

इसके बाद उन्होंने मुझे बताया कि उनके प्रयासों के लिए उन्हें राज्यपाल द्वारा सम्मानित किया गया है। आजकल उन्हें खेती और जंगल सम्बन्धी समेल्लनों के लिए राज्य स्तरीय बैठकों में बुलाया जाता है, उनकी राय पूछने के लिए। ये सब सुनकर मुझे ऐसा लग रहा था मानो मैं कोई कहानी सुन रही हूँ और कहानी का हीरो मेरे सामने बैठा दाढ़ी पर हाथ फेरता मुझे चौंकाए जा रहा है।

कौन जानता था कि मेरी बोर यात्रा का साथी एक अनोखा जंगल प्रेमी होगा। और सबसे खास बात ये कि देखने और बात करने में वो किसी आम पहाड़ी बौड़ा जैसे ही थे। न कोई ज्ञान देने की कोशिश, न समाज को बदलने के लिए कोई क्रान्ति का भाषण।

मैंने पूछा, “तो, जंगली नाम क्यों?”

बौड़ाजी ने सीधा-सा जवाब दिया, “जंगली मतलब जंगल को चाहने वाला! पिछड़ा या असामाजिक नहीं!”

4		2	1	5		3		9
9		6	2	3			8	7
	7					4		1
	4			6	1		5	2
2	9		4		3	8		6
8		1		2			3	4
1	3	9	7			2	4	5
	2			1			9	8
		8		4				

सुडोकू 78

दिए हुए बॉक्स में 1 से 9 तक के अंक भरने हैं। आसान लग रहा है ना? पर ये अंक ऐसे ही नहीं भरने हैं। अंक भरते समय तुम्हें यह ध्यान रखना है कि 1 से 9 तक के अंक एक ही पंक्ति और स्तम्भ में दोहराए ना जाएँ। साथ ही साथ, गुलाबी लाइन से बने बॉक्स में तुमको नौ डब्बे दिख रहे होंगे। ध्यान रहे कि हर गुलाबी बॉक्स में भी 1 से 9 तक के अंक दुबारा ना आएँ। कठिन भी नहीं है, करके तो देखो।

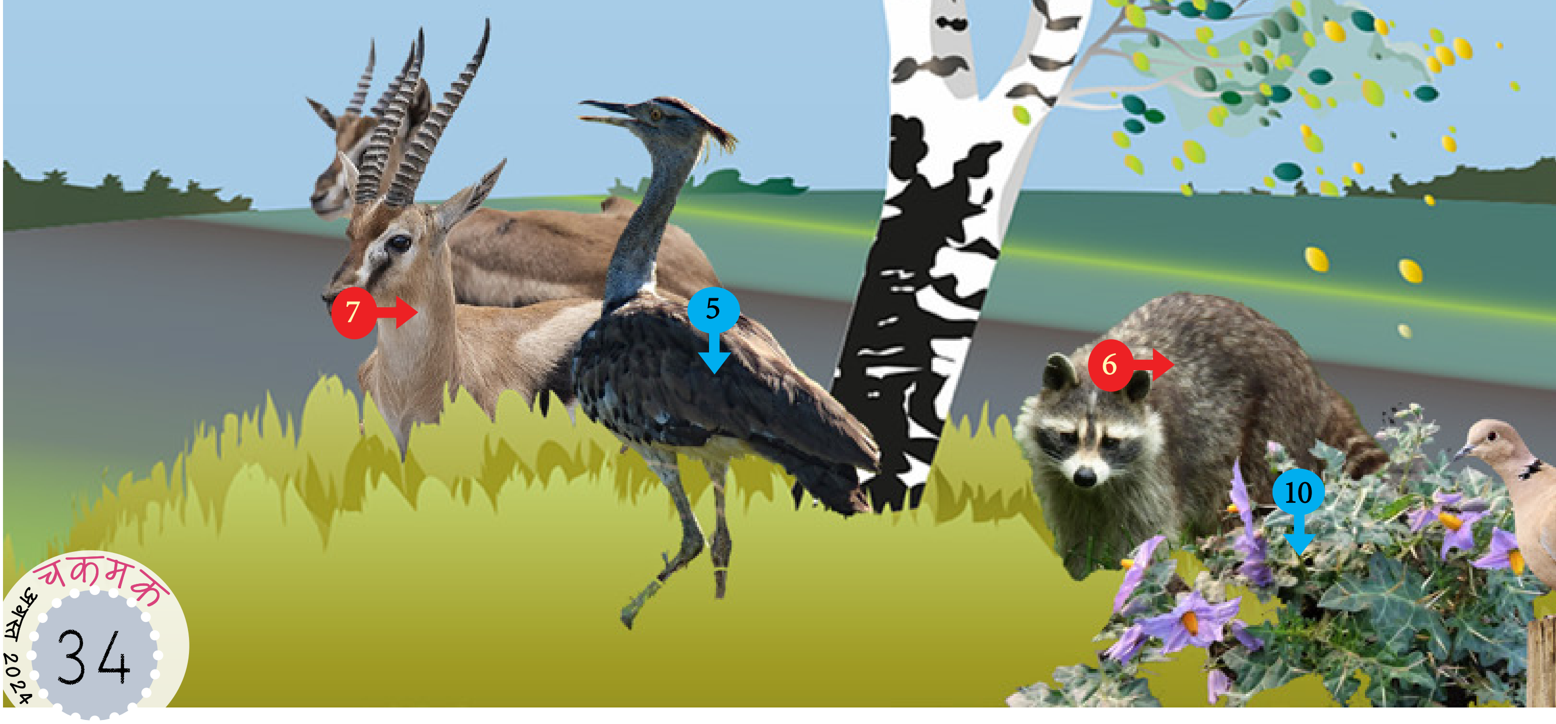

■	1	2		3	■	4	■	5
■	■		■		■	6		
7			■	8			■	
	■	■	■		■	■	■	
9	10	■	11	■	■	12	13	
■	14			■	15	■		■
16		■	■	17		■		■
■	18		■		■	19		20
21		■	22			■	■	

चित्र पहेली

बाएँ से दाएँ

ऊपर से नीचे

जवाब पेज 42 पर

घर की याद

शिवानी
ग्यारहवीं, उत्तराखण्ड

शायद ही कोई दिन ऐसा हो जिस दिन मेरी यादों में मेरे घर या गाँव का ज़िक्र ना हो। मेरा जन्म पहाड़ों की वादियों के बीच में हुआ है। इसलिए मेरा प्राकृतिक वातावरण व पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों से लगाव बहुत अधिक है। किन्हीं कारणों के चलते मैं अपनी ताई (यानी मेरी माँ की बड़ी बहन) के घर भीमताल में रहकर पढ़ाई पूरी कर रही हूँ।

हालाँकि भीमताल भी एक पहाड़ी क्षेत्र है। बावजूद इसके भी मैं अपने घर को बहुत याद करती हूँ। क्योंकि मेरा अच्छा-बुरा हर समय वहाँ बीता है। मैं छुट्टियों में घर जाती हूँ तो सबसे पहले अपने जानवरों को देखती हूँ। फिर माँ-बाबा से मिलती हूँ। माँ तो सबसे पहले यही पूछती है कि तू इतनी पतली क्यों हो गई है।

अपने घर की हर चीज़ को सजाकर रखना व साफ-सफाई करना मुझे बहुत पसन्द है। लेकिन मेरा भाई घर को कबाड़खाना बना देता है। इस कारण हम दोनों में बहस हो जाती है। जब छुट्टियों के समाप्त होने का समय होता

चित्र: काजल, विश्वास विद्यालय, गुरुग्राम, हरयाणा

है तो मैं बहुत उदास हो जाती हूँ। लेकिन पढ़ना भी ज़रूरी है इसलिए वापिस जाना ही पड़ता है। माँ की आँखों में आँसू देखकर मन भर आता है। बुरा तो बाबा को भी लगता है लेकिन वह दिखाते नहीं हैं। यहाँ आने के बाद भी मुझे घर की याद आती है तो मैं भावुक हो जाती हूँ।

रहती हूँ घर से दूर
घर की बहुत याद आती है

अब क्या बताऊँ माँ तुझे
तेरी बेटी पतली क्यों हो जाती है।

चित्र: शिखा लोवंशी, नौवीं, गुफ्तगू, लारी प्रोजेक्ट, चकमक क्लब, ग्राम नूरगंज, रायसेन, मध्य प्रदेश

बरसात

कशिश
तीसरी
प्राथमिक विद्यालय बंगला पूठरी
बुलन्दशहर, उत्तर प्रदेश

बरसात आई, कौआ भागा
उसे देखकर बच्चे नाचे
बच्चे देखकर मेंढक टर-टरटराया
मेंढक देखकर कुत्ते भौंकें
फिर सब मिलकर बारिश में नहाए

चित्र: काजल, सावित्री बाई फुले फातिमा शेख पुस्तकालय, भोपाल, मध्य प्रदेश

चित्र: वर्षा अहिरवार, नौवीं, शासकीय माध्यमिक शाला, जेरवारा, सागर, मध्य प्रदेश

बाढ़ और पलायन

पिंकी साहू
सातवीं, कम्पोज़िट स्कूल, धुसाह
बलरामपुर, उत्तर प्रदेश

हमारा परिवार एक गाँव में रहता था। हमारा घर नदी के किनारे था। जब कभी बाढ़ आती तो हमारे घरों में पानी आ जाता था। इसलिए बाबा परेशान रहते थे। पास कहीं शहर में मेरे बाबा के भाई रहते थे। बाबा ने अपने भाई से बात की तो उन्होंने कहा कि हमारे घर में दो ही कमरे हैं। यहाँ पर सबके रहने की जगह ही नहीं है। मेरे परिवार वाले बहुत चिन्ता में पड़ गए।

गर्मी बीत रही थी और बारिश का मौसम आने वाला था। तब मेरी बुआ ने पापा की मदद की। और अपने शहर में अपने घर के पास ही ज़मीन का प्रबन्ध करा दिया। पापा और बाबा ने मज़दूरों के साथ मज़दूर बनकर थोड़े समय में छोटा-सा घर बना लिया।

अब हम शहर में आकर बस गए। यहीं के सरकारी विद्यालय में हम लोग पढ़ने लगे। और पापा ने सिलाई की दुकान खोल ली। हमारे गाँव में एक ही फसल हो पाती है, वो भी ठण्ड के मौसम में – लाही और गेंहूँ। बरसात के मौसम में हर साल बाढ़ आती ही है। ठण्ड की फसल देखने के लिए दादी और बाबा गाँव चले जाते हैं।

कण्डे

नन्दिनी जाटव
आठवीं, शासकीय सरोजिनी नायडू कन्या उच्चतर माध्यमिक शाला, बैरसिया, भोपाल, मध्य प्रदेश

हमारे गाँव में कण्डे दो रुपए के मिलते हैं। हमारी गाय गोबर देती है। हमारी मम्मी, चाची, दादी सब कण्डे बनाते हैं। मेरे पिताजी बाज़ार में बेचने जाते हैं। मेरे घर भी बहुत सारे लोग कण्डे लेने आते हैं।

चित्र: नीआ, सात साल, आगरा, उत्तर प्रदेश

दादा-दादी का साथ

आरव सिंह
चौथी, सरिस्का, शिव नाडर स्कूल, नोएडा, उत्तर प्रदेश

इस बार छुट्टियाँ मनाने मैं अपने दादा-दादी के साथ उनके गाँव गया। हम गुजरात के एक ज़िले के छोटे-से गाँव में गए। मैं पूरी मस्ती से भरा हुआ था। दादी ने मुझे मेरे पिता के कुछ नटखट, शरारती और मज़ेदार किस्सों के बारे में बताया।

एक दिन मेरे दादा मुझे रेगिस्तान की लम्बी सैर पर ले गए। वह दुनिया के सबसे बड़े रेगिस्तानों में है। हमने वहाँ ऊँट की सवारी की। हम सूर्यास्त तक वहीं घूमते रहे। दादी ने मुझे कच्छ की कढ़ाई के बारे में बताया। वहाँ महिलाएँ कढ़ाई वाले कपड़े बेचकर अपना जीवन चलाती हैं।

मैं कच्छ की खूबसूरती देखकर दंग रह गया। यह मेरा दादा-दादी के साथ सबसे सुन्दर अनुभव था। दादा-दादी का प्रेम किस तरह हमारे परिवार और भावों को जोड़े रखता है, यह मैंने अपनी इस यात्रा में अनुभव किया।

डरपोक शेर

एक बार एक डरपोक शेर था। वो चूहे, चींटी सभी से डरता था। एक दिन वो जंगल में घूम रहा था। उसे जंगल में जादू का एक पत्थर मिला। उसने सोचा कि यह तो अलग ही शेप का पत्थर है। वो उसे ले गया और सोचने लगा अगर मैं जंगल का राजा होता तो सब मुझसे डरते। जादू के पत्थर ने उसकी सुन ली। तब से वो जंगल का राजा बन गया।

विवान
पहली, के के एकैडमी, लखनऊ उत्तर प्रदेश

एक जंगल था। जंगल के किनारे एक नदी बहती थी। उस नदी में बहुत सारे जानवर रहते थे, जैसे मछली, मगरमच्छ आदि। जंगल का राजा हाथी था। हाथी बहुत ही दयालु था। वह सभी की मदद करता था।

एक दिन हाथी नदी में पानी पी रहा था। पानी पीते-पीते उसने देखा कि एक मगरमच्छ नदी के किनारे घायल पड़ा है। उसके पैरों में से खून निकल रहा है। हाथी मगरमच्छ के पास गया और उससे पूछा, "तुम्हारे पैरों को क्या हो गया?" मगरमच्छ ने कहा, "मेरे पैरों को शेर ने पकड़ लिया था। मैं बड़ी मुश्किल से जान बचाकर आया हूँ।" हाथी ने कहा, "तुम चिन्ता मत करो। मैं तुम्हारे पैरों पर दवाई लगाकर उन्हें ठीक कर दूँगा।"

हाथी जंगल में गया। वहाँ से डॉक्टर भालू को लेकर आया। डॉक्टर भालू ने डरते-डरते मगरमच्छ के पैरों का इलाज किया। मगरमच्छ बोला, "डॉक्टर भालू आपको मुझसे डरने की ज़रूरत नहीं है। आप मेरी जान बचा रहे हो। मैं आपको नुकसान नहीं पहुँचाऊँगा।" मगरमच्छ ने हाथी और भालू को धन्यवाद दिया। उस दिन के बाद से वह सब दोस्त बन गए।

हाथी व मगरमच्छ

अजहर
समूह-सागर, दिगन्तर विद्यालय, जयपुर, राजस्थान

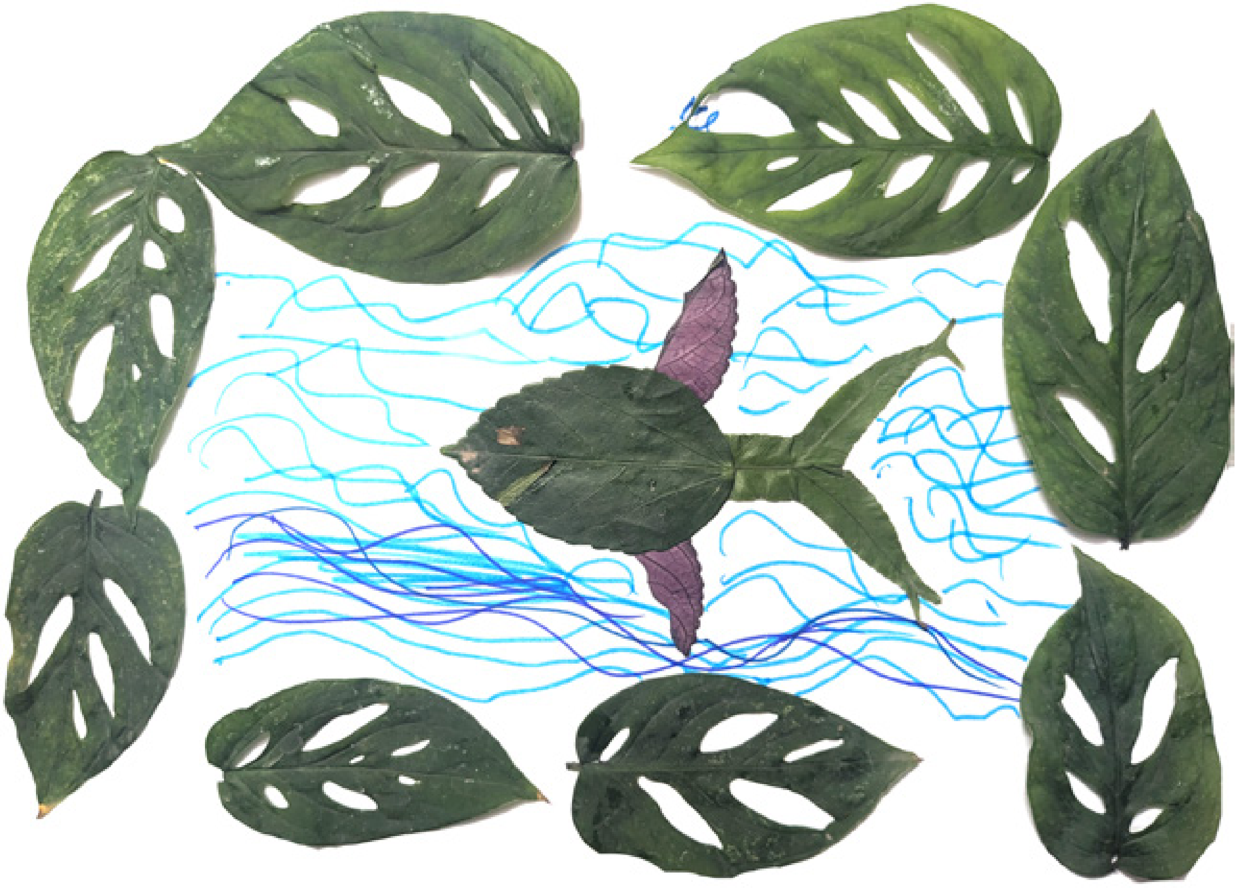

चित्र: निर्वी भावसार, तीसरी, लिटिल जीनियस इंटरनेशनल स्कूल, इन्दौर, मध्य प्रदेश

माथापच्ची जवाब

1.

12	10	120
12	8	96
144	80	X

12 x 10 = 120
x x
12 x 8 = 96
= =
144 80

2.

3. कुल 585 तस्वीरें इस्तेमाल हुईं और हरेक समूह ने 9 तस्वीरें इस्तेमाल कीं। इसलिए समूहों की संख्या हुई 585 ÷9 = 65। चूँकि एक समूह में 3 बच्चे थे। इसलिए बच्चों की कुल संख्या हुई 65 x 3 = 195

4.

जा	प	स	दी	पा	से	म	नी	श
अ	द	र	क	ल	क	ट	ह	ल
र	प्या	सो	व	क	पी	र	ते	ज
बी	ज़	मे	दो	ल	म	श	रू	म
लौ	की	बैं	थी	ह	ट	क	टि	ला
ब	थु	आ	ग	सु	मा	गा	ण्डा	मि
र	स	ह	ज	न	ट	क	ज	पा
ब	भि	चू	कं	द	र	रे	नी	र
टी	ण्डी	आ	पा	शि	म	ला	मि	र्च

5. माना कि हरे गुब्बारों की संख्या = x
चूँकि लाल गुब्बारों की संख्या हरे गुब्बारों की 4 गुना है, इसलिए लाल गुब्बारों की संख्या = 4x
पीले गुब्बारों की संख्या हरे गुब्बारों से 6 ज़्यादा है, इसलिए पीले गुब्बारों की संख्या = x + 6
x + 4x + x + 6 = 60
6x + 6 = 60
x = 60-6
6x = 54
x = 9, इसलिए हरे गुब्बारे 9 होंगे।

6. 3 x 3 = 9, 5 x 5 = 25, 7 X 7 = 49... इस पैटर्न के हिसाब से उत्तर 11 x 11 = 121 होगा।

7.

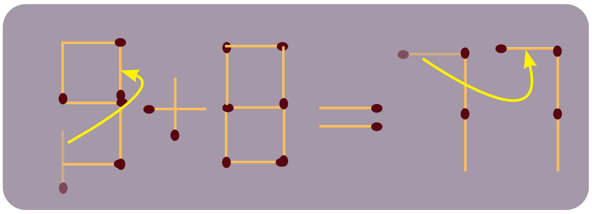

8. 11 बॉक्स

भूलसुधार: जुलाई अंक में प्रकाशित कहानी 'गप्पियों की गप्प' के चित्र ईशा गोस्वामी ने बनाए थे।

9.

इस अंक की चित्रपहेली का जवाब

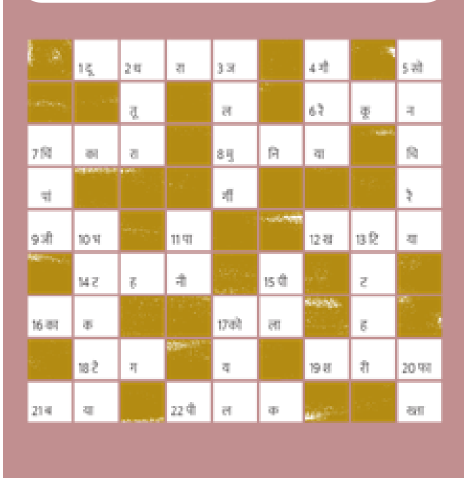

सुडोकू-78 का जवाब

4	8	2	1	5	7	3	6	9
9	1	6	2	3	4	5	8	7
5	7	3	6	9	8	4	2	1
3	4	7	8	6	1	9	5	2
2	9	5	4	7	3	8	1	6
8	6	1	5	2	9	7	3	4
1	3	9	7	8	6	2	4	5
7	2	4	3	1	5	6	9	8
6	5	8	9	4	2	1	7	3

तुम भी जानो

ये कचरा बीनेंगे — अन्तरिक्ष से

हम मनुष्य जहाँ भी जाते हैं वहाँ अपना कचरा छोड़कर आते हैं — अन्तरिक्ष और चाँद पर भी। 1957 (जब अन्तरिक्ष में हमने पहली बार प्रवेश किया) से आज तक अन्तरिक्ष में 2000 सक्रिय सैटेलाइट (कृत्रिम उपग्रह) और 3000 निष्क्रिय सैटेलाइट पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे हैं। इन 3000 बेकार सैटेलाइट के अलावा 10 सेंटीमीटर से भी ज़्यादा आकार वाले लगभग 34,000 और इससे भी छोटे लाखों कचरे के टुकड़े भी हमारी पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे हैं।

इन्हें हटाने के दो तरीके हैं। पहला है इन्हें पकड़कर पृथ्वी के वायुमण्डल में धकेलना जहाँ ये जलकर खतम हो जाएँगे। दूसरा है इनको पकड़कर या लेसर के ज़रिए इनकी गति इतनी बढ़ाना कि ये पृथ्वी की कक्षा से दूर चले जाएँ और उसकी परिक्रमा करना बन्द कर दें व अन्य सैटेलाइट से टकरा न सकें। जापान की एक कम्पनी ऐसा ही करने की कोशिश कर रही है। अन्तरिक्ष में इतना कचरा इकट्ठा हो गया है कि अब सारे देशों के सामने अपने-अपने कचरे का इन्तज़ाम करने की ज़रूरत पैदा हो गई है।

अब गोलियों से कर सकते हो मंजन

1898 से हम टूथपेस्ट का इस्तेमाल करते आ रहे हैं। लेकिन ये पर्यावरण के लिए काफी हानिकारक है क्योंकि इसके टूयब दोबारा इस्तेमाल नहीं हो सकते। साथ ही अलग-अलग किस्म के प्लास्टिक और मैटल से बनने के कारण इन्हें विघटित होने में सैकड़ों साल लग सकते हैं। ये लैंडफिल में चूर-चूर होकर ऐसे ही रह जाते हैं। अब इनकी जगह लेने आई हैं कुछ गोलियाँ। जब भी मंजन करना हो तो एक गोली चबाओ और उसके झाग से मंजन कर लो। ये गोलियाँ महँगी हैं और सभी जगह नहीं मिलती हैं। लेकिन शायद ये टूथपेस्ट का भविष्य हैं।

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र./भोपाल/261/2021-23

रोहन चक्रवर्ती
अनुवाद: विनता विश्वनाथन

जैव विकास जीनियस

प्रकाशक एवं मुद्रक राजेश खिंदरी द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य फाउंडेशन, जाटखेड़ी, फॉर्च्यून कस्तूरी के पास, भोपाल, मध्य प्रदेश 462 026 से प्रकाशित एवं आर के सिक्युप्रिन्ट प्रा लि प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इण्डस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादक: विनता विश्वनाथन